[2018] 10 एस. सी. आर. 233

मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया

वी.

केरल राज्य और ओ. आर. एस.

(2018 की लिखित याचिका (सी) संख्या-232)

12 सितंबर, 2018

[अरुण मिश्रा और इंदिरा बनर्जी, जे. जे.]

भारत का संविधानः

अनुच्छेद 14,50 और 233 (1)-'शक्तियों के पृथक्करण' का सिद्धांत-एमबीबीएस पाठ्यक्रम में 180 छात्रों के प्रवेश को प्रवेश पर्यवेक्षी समिति द्वारा रद्द कर दिया गया था-इस आदेश की पुष्टि उच्च न्यायालय के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई थी-इसके बाद राज्य सरकार ने अध्यादेश को अधिसूचित किया जिसमें उन 180 छात्रों के प्रवेश को नियमित करने की मांग की गई थी-अध्यादेश को इस आधार पर चुनौती देने वाली रिट याचिका कि अध्यादेश अदालत के निर्णयों/आदेशों को रद्द करने के बराबर है-आयोजित किया गयाः विवादित अध्यादेश स्पष्ट है

न्यायिक समीक्षा के क्षेत्र में अड़चन जो न्यायपालिका के लिए आरक्षित है-अध्यादेश में प्रावधान अनुच्छेद के तहत निहित शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन थे। 50 -

अध्यादेश न केवल अनुज्ञेय है और विधायी से परे है

राज्य की क्षमता के कारण, न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अधिदेश का पालन नहीं करने में कॉलेज द्वारा की गई अवैधता और मनमानेपन को बनाए रखने का भी प्रभाव पड़ा -

न्यायपालिका की स्वतंत्रता कानून के शासन के लिए मौलिक है-एक कानून को न्यायिक शक्ति के पृथक्करण के उल्लंघन के आधार पर अमान्य किया जा सकता है क्योंकि इस तरह का उल्लंघन अनुच्छेद के तहत प्रदान की गई समानता का निषेध है। 14 – न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं किया जा सकता है कानून जो न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करता है

अमान्य किया गया-अध्यादेश अधिकार से परे है और न्यायपालिका के लिए निर्धारित क्षेत्र में प्रवेश करता है, क्योंकि यह निर्णयों को रद्द करने का प्रयास करता है। अदालत से।

कला. 141 – निर्णय-आयोजित का बाध्यकारी प्रभावः यदि अपील करने की अनुमति देने से इनकार करने वाला आदेश बोलने का आदेश है, तो यह एक

कला के अर्थ के भीतर कानून की घोषणा। 141 - कानून के अलावा आदेश में जो कुछ भी कहा गया है, वह न्यायालय के निष्कर्ष हैं जो पक्षों को बाध्य करेंगे और न्यायालय, न्यायाधिकरण या

प्राधिकरण-पूर्ववर्ती।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कला. 142 - अधिकार क्षेत्र के तहत अधिकार: पावर यू/आर्ट। 142 न्यायालय द्वारा अपने स्वयं के निर्णय को रद्द करने के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है और

अवैधता को कायम रखें।

रिट याचिकाओं को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

पकड़ना: 1.1 केरल जुलूस महाविद्यालयों का एक नंगे पाठ (चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रवेश का नियमितकरण)

अध्यादेश, 2017, यह स्पष्ट करता है कि इसका उद्देश्य शैक्षणिक वर्ष के दौरान छात्रों के प्रवेश को नियमित करना है, जिसे प्रवेश पर्यवेक्षी समिति (ए. एस. सी.), उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा केवल दो कॉलेजों और छात्रों को लाभान्वित करने के लिए अलग रखा गया था। [पैरा 18] [223-ई-एफ]

1.2 राज्य सरकार द्वारा विवादित अध्यादेश द्वारा जो किया गया है, वह स्पष्ट रूप से न्यायिक क्षेत्र में निहित है। समीक्षा की गई और यह स्पष्ट रूप से दुस्साहस था। राज्य सरकार को इस मामले में अध्यादेश/विधान जारी करने की बिल्कुल भी अनुमति नहीं थी। न केवल न्यायालय के निर्णय को रद्द कर दिया गया है और प्रवेश में की गई मनमानी 17 स्पष्ट थी, और उच्च न्यायालय का निर्णय जिसे इस न्यायालय द्वारा आवेदनों के संबंध में पुष्टि की गई थी

अगर वे ऑनलाइन आवेदन थे तो उन्हें रद्द कर दिया गया है। यह स्पष्ट रूप से निर्णय को रद्द करने का एक कार्य था और न्यायपालिका में निहित न्यायिक शक्तियों का उल्लंघन है। राज्य सरकार उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय/आदेशों को रद्द करने के लिए तैयार नहीं थी।

न्यायालय द्वारा या इस न्यायालय द्वारा। यह मौजूदा कानून में किसी दोष को हटाने का मामला नहीं था। इस न्यायालय के विभिन्न संविधान पीठ के फैसलों ने इस क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानून के सिद्धांतों को तय किया है। यह गुजर जाता है।

न्यायिक शक्ति का पृथक्करण क्योंकि इस तरह का उल्लंघन निषेध है अनुच्छेद 14 के तहत समानता। कानून को अमान्य घोषित किया जा सकता है यदि यह पाया जाता है कि उसने संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन किया है। द.

विधायिका किसी न्यायालय के किसी भी निर्णय को अमान्य या अप्रभावी घोषित नहीं कर सकती है। यह अदालत द्वारा बताए गए कानून के दोषों को दूर कर सकता है या इसके बारे में पता चलने पर; अन्यथा, अदालत का निर्णय हमेशा बाध्य होना चाहिए जब तक कि वे शर्तें जिन पर भारत की चिकित्सा परिषद v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस.

यह आधार हैं जो मौलिक रूप से इतने परिवर्तित हैं कि ऐसी परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था। विधायिका एक मान्य कानून बना सकती है। इस तरह से सत्यापन करने से उस दोष को दूर किया जाता है जो अदालत को मौजूदा कानून में मिलता है। न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं किया जा सकता है और इस तरह के कानून को अमान्य किया जा सकता है। [पैरा 24] [234-एफ-एच; 235-ए-बी]

1.4 विवादित अध्यादेश इंगित करता है कि यह किए गए प्रवेशों को नियमित करने का एक स्पष्ट प्रयास है जिसे न केवल उच्च न्यायालय द्वारा बल्कि इस न्यायालय द्वारा अमान्य घोषित किया गया था, जब इस न्यायालय ने दिनांक 14.11.2016 द्वारा पारित आदेश पर विचार किया था। ए. एस. सी. ने कई दिनों तक मामले की सुनवाई करने के बाद अदालत ने एक तर्कपूर्ण आदेश पारित किया था। मामलों को खारिज/निपटाते समय, इस न्यायालय ने उन 30 छात्रों को अगले शैक्षणिक सत्र में प्रवेश देने का निर्देश दिया, जिन्हें अवैध रूप से प्रवेश से वंचित कर दिया गया था। यह स्पष्ट रूप से मामले को सीमित रूप से खारिज नहीं किया गया था, बल्कि एक तर्कपूर्ण आदेश था। कॉलेजों और अन्य लोगों द्वारा दायर रिट याचिकाओं में, 14.11.2016 दिनांकित आदेश की वैधता और वैधता पर सवाल उठाया गया था। हालांकि, इस अदालत ने इसे बरकरार रखा है। दोनों मेडिकल कॉलेजों द्वारा इस न्यायालय में भारी मात्रा में अभिलेख दायर किए गए थे। जब निर्णय दिया गया तो छात्रों को भी सुना गया। इसके बाद भी कई याचिकाएं दायर की गईं जिन्हें इस अदालत ने खारिज कर दिया। इस प्रकार, जब इस न्यायालय ने अवैधता के आधार पर 14.11.2016 दिनांकित आदेश को बरकरार रखा है और

अनियमितताओं और उचित प्रक्रिया का पालन न करने पर इस तरह के प्रवेशों को बिल्कुल भी नियमित नहीं किया जा सकता था। राज्य सरकार ने अपनी शक्तियों को पार कर लिया है और न्यायपालिका के लिए आरक्षित क्षेत्र पर अपनी पकड़ मजबूत कर ली है। यह फैसले को रद्द नहीं कर सकता था। फैसले द्वारा ऑनलाइन प्रक्रिया निर्धारित की गई थी। [पैरा 33] [251-जी-एच; 252-ए-डी]

1.5 राज्य सरकार ने क्या किया है

विवादित अध्यादेश न केवल अनुज्ञेय है और विधायी क्षमता से परे है, इसका प्रभाव स्थायी होने का भी है।

इस न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के जनादेश का पालन नहीं करके विचाराधीन कॉलेजों द्वारा की गई अवैधता और मनमानेपन। अवैध और अस्वीकार्य में मनमानेपन और अवैधता को छिपाने का प्रयास किया गया है।

जिस तरह से राज्य सरकार के पास कोई क्षमता नहीं थी। अध्यादेश में किए गए प्रावधान अन्यथा भी काफी अवैध हैं [2018] 10 एस. सी. आर.

और भारत के संविधान के अनुच्छेद 50 के तहत निहित शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन करने के अलावा मनमाना है।

[पैरा 34] [252-एफ-एच]

जनपद सभा छिंदवाड़ा बनाम। मध्य प्रांत

सिंडिकेट लिमिटेड और एन. आर. (1970) 1 एससीसी 509: [1970] 3

एससीआर 745; पुनः: कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण

(1993) 1 पूरक। एस. सी. सी. 96 (II): [1991] 2 पूरक। एस. सी. आर. 497; तमिलनाडु राज्य और अन्य। वी. केरल राज्य और अन्य। (2014) 12 एससीसी 696: [2014] 12 एससीआर 875

- पीछा किया। एस. आर. भागवत और अन्य। वी. मैसूर राज्य (1995) 6 एस. सी. सी. 16 [1995] 3 पूरक। एससीआर 545; एस. टी. सादिक बनाम केरल राज्य और अन्य। (2015) 4 एससीसी 400 [2015] 3 एससीआर

287 - पर भरोसा किया। बेलगाम गार्डनर्स सहकारी उत्पादन आपूर्ति

एंड सेल सोसाइटी लिमिटेड v. कर्नाटक राज्य

(1993) 1 पूरक। एससीसी 96: [1991] 2 पूरक। एस. सी. आर. 497; तमिलनाडु राज्य और अन्य। वी. केरल राज्य और अन्य। (2014) 12 एस. सी. सी. 696 [2014] 12 एस. सी. आर. 875 चेविटी वेंकन्ना यादव बनाम। तेलंगाना राज्य और अन्य। (2017) 1

एससीसी 283 [2016] 7 एससीआर 689; गोवा फाउंडेशन और

एन. आर. वी. गोवा राज्य और अन्र। (2016) 6 एससीसी 602: [2016] 1 एससीआर 1025; गोवा ग्लास फाइबर लिमिटेड बनाम। गोवा राज्य और एन. आर. (2010) 6 एससीसी 499: [2010] 5 एस. सी. आर. 970; टीका राम और अन्य। वी. उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य। (2009) 10 एस. सी. सी. 689 [2009] 14 एस. सी. आर. 905-संदर्भित।

2.1 उच्चतम न्यायालय द्वारा किसी मामले को खारिज करना एक गैर-मौखिक आदेश द्वारा खारिज किया जाना बना रहेगा जिसमें कोई कारण नहीं दिया गया है और इस न्यायालय द्वारा कोई कानून घोषित नहीं किया गया है। यदि बोलने के आदेश द्वारा अपील करने की अनुमति देने से इनकार करने वाला आदेश छुट्टी देने से इनकार करने के कारण देता है, तो आदेश में दो कारण हैं। निहितार्थ; सबसे पहले आदेश में निहित कानून का बयान है

संविधान के अनुच्छेद 141 के अर्थ के भीतर इस न्यायालय द्वारा विधि की घोषणा; दूसरा, विधि की घोषणा के अलावा, आदेश में जो कुछ भी कहा गया है, वह इस न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष हैं जो पक्षकारों और न्यायालय, न्यायाधिकरण या प्राधिकरण को भी बाध्य करेंगे।

[पैरा 35] [256-बी-डी] मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया v. केरल राज्य और ओ. आर. एस.

2.2 वर्तमान मामले में, सभी पक्षों ने दायर किया है

इस न्यायालय द्वारा आदेश पारित किए जाने के दौरान अभिवचन। दस्तावेजों और दस्तावेजों की अधिकता को रिकॉर्ड में लेने के लिए जवाबी हलफनामे, प्रत्युत्तर और विभिन्न अन्य आवेदन इस अदालत के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे और इस पर कई दिनों तक बहस की गई थी। इस न्यायालय ने मामले की सुनवाई की है और उसके बाद दिनांकित 14.11.2016 आदेश की वैधता के बारे में राय व्यक्त की है और निष्कर्ष दर्ज किया है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के खिलाफ एसएलपी को भी खारिज कर दिया गया था और इस न्यायालय ने निर्देश दिया था कि अगले सत्र में 30 छात्रों को प्रवेश दिया जाए। स्वतंत्र निर्देश जारी किए गए जिनका उच्च न्यायालय द्वारा आदेश नहीं दिया गया था। इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि उन्हें अकादमिक में प्रवेश दिया जाना चाहिए

सत्र 2017-18। इस प्रकार, यह तर्क देना सही नहीं है कि ऐसा नहीं था इस न्यायालय द्वारा गुण-दोष पर निर्णय। [पैरा 36] [256-डी-ई; 257-ए-बी]

डॉ. प्रीति श्रीवास्तव और अन्र। वी. एम. पी. और अन्य का राज्य।

(1999) 7 एससीसी 120: [1999] 1 पूरक। एस. सी. आर. 249; अनीता नौकरी और अन्य। वी. केरल राज्य 2018 (6) स्केल 174

अप्रयोज्य रखा गया

कुन्हयमद और ओआरएस। वी. केरल राज्य और अन्र। (2000)

6 एससीसी 359: [2000] 1 पूरक। एस. सी. आर. 538-संदर्भित।

3. वर्तमान मामले में, पिछले फैसलों को ध्यान में रखते हुए, शक्ति यू/आर्ट। 142 संविधान का प्रयोग नहीं किया जा सकता है और इसके अलावा जब निर्णय अंतिम हो जाते हैं, तो वे इस न्यायालय सहित सभी संबंधित लोगों के लिए बाध्यकारी होते हैं। अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग अपने स्वयं के निर्णय को रद्द करने और अवैधता को बनाए रखने के लिए नहीं किया जा सकता है। [पैरा 39] [259-जी]

मामला कानून संदर्भ

[1970] 3 एससीआर 745

पीछा किया।

पै

रा 17

[1991] 2 पूरक। इसके बाद एस. सी. आर. 497 आया।

पै

रा 23

[2014] 12 एससीआर 875

पीछा किया।

पै

रा 24

[1995] 3 पूरक। एस. सी. आर 545 पर निर्भर

पै

रा 25

[2015] 3 एससीआर 287

उस पर भरोसा करें

पैरा 26

[2018] एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2016] 7 एससीआर 689

संदर्भित किया गया है

पै

रा 27

[2016] 1 एससीआर 1025

संदर्भित किया गया है

पै

रा 27

[2010] 5 एससीआर 970

संदर्भित किया गया है

पै

रा 29

[2009] 14 एससीआर 905

पैर

ा 30

संदर्भित किया गया है

2018 (6) स्केल 174

संदर्भित किया गया है

पै

रा 31

संदर्भित किया गया है

[2000] 1 पूरक। एससीआर 538

पै

रा 35

[1999] 1 पूरक। एससीआर 249

अप्रयोज्य रखा गया

पैर

ा 38

पै

रा 39

अप्रयोज्य रखा गया

2018 (6) स्केल 174

नागरिक मूल न्यायनिर्णय: लेखन याचिका (सिविल)

2018 का सं. 238

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत

के साथ

2018 की लिखित याचिका (सिविल) संख्या 178।

विकास सिंह, परमजीत सिंह पटवालिया, नीरज किशन कौल,

सुश्री नयनतारा रॉय, सुश्री ऐनी मैथ्यू, आर. आर. कुमार, सुश्री मंजुला गुप्ता, दीपक प्रकाश, विशाल सोमानी, सुभाष चंद्रन के. आर., सुश्री श्री देवी, सुश्री यानमी फज़ांग, रानीव दहिया, कुणाल सिंह, नचिकेता वाजपेयी, सुभाष चौधरी, सी. के. सासी, हारिस बीरन, मुश्ताक सलीम, उस्मान गनी खान, देव प्रकाश, सुश्री पल्लवी प्रताप, सुमित सौरव, सचिन शर्मा, जी. एस. मक्कर, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

भारत की चिकित्सा परिषद v. केरल राज्य और ओ. आर. एस.

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

अरुण मिश्रा, जे. 1. रिट याचिकाओं में शामिल प्रश्न यह है कि क्या केरल राज्य केरल व्यावसायिक महाविद्यालय (चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रवेश का नियमितकरण) अध्यादेश, 2017 (जिसे इसके बाद "अध्यादेश" के रूप में संदर्भित किया गया है) को जारी करने के लिए सक्षम है, जिसका उद्देश्य इस न्यायालय के निर्णयों और आदेशों को रद्द करना और न्यायपालिका की शक्ति का अतिक्रमण करना है।

2. केरल राज्य ने कन्नूर मेडिकल कॉलेज और करुणा मेडिकल कॉलेज में अवैध रूप से भर्ती 180 छात्रों के प्रवेश को नियमित करने के लिए विवादित अध्यादेश जारी किया है।

क्रमशः प्रेस्टीज एजुकेशनल ट्रस्ट और सेफ डेवलपमेंट एल्म्स ट्रस्ट। छात्रों को शैक्षणिक वर्ष 2016-17 में उक्त मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश दिया गया था। जाँच के बाद, पेशेवर कॉलेजों की प्रवेश पर्यवेक्षी समिति (संक्षेप में "ए. एस. सी".) द्वारा यह पाया गया कि प्रवेश अवैध थे। केरल उच्च न्यायालय और इस न्यायालय ने इस फैसले को बरकरार रखा। 3. पृष्ठभूमि तथ्य यह है कि 28.4.2016 पर, यह न्यायालय संकल्प चैरिटेबल ट्रस्ट v. भारत संघ और अन्य। (2016) 7 एससीसी

487 निर्देश दिया कि एमबीबीएस/बीडीएस पाठ्यक्रमों में प्रवेश राष्ट्रीय पात्रता-सह-प्रवेश परीक्षा (एन. ई. ई. टी.) के माध्यम से होगा। ए. एस. सी. ने दिनांक 4.8.2016 के आदेश के माध्यम से केरल राज्य के सभी पेशेवर कॉलेजों को निम्नलिखित के अनुपालन में प्रवेश प्रक्रिया आयोजित करने के लिए कई निर्देश जारी किए:

इस न्यायालय द्वारा संकल्प चैरिटेबल ट्रस्ट में दिए गए निर्देश (ऊपर)। 9.8.2016 पर, केंद्र सरकार ने सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को इसके लिए संयुक्त/केंद्रीकृत परामर्श आयोजित करने का निर्देश दिया।

मॉडर्न डेंटल कॉलेज एंड रिसर्च सेंटर के मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के अनुरूप, संबंधित राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में एमबीबीएस पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए शैक्षणिक वर्ष 2016-17

& एन. आर. वी. एम. पी. और अन्य का राज्य। (2016) 7 एससीसी 353।

4. केरल सरकार ने दिनांक 23.8.2016 के आदेश के माध्यम से सभी मेडिकल कॉलेजों को केवल उन छात्रों को प्रवेश देने का निर्देश दिया, जिनका चयन किया गया था।

सामान्य परामर्श के माध्यम से। 2016 की रिट याचिका [सिविल] No.28041 केरल उच्च न्यायालय में दिनांकित 23.8.2016 के आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई थी। उच्च न्यायालय ने दिनांक 26.8.2016 के आदेश के माध्यम से अंतरिम निर्देश जारी किए कि [2018] 10 एस. सी. आर.

शैक्षणिक वर्ष के लिए एमबीबीएस पाठ्यक्रम में प्रवेश एन. ई. ई. टी., 2016 में प्राप्त अंकों के आधार पर आयोजित किए जाएंगे और आवेदकों की योग्यता और पहचान के संबंध में पारदर्शिता की सुविधा के लिए सभी आवेदन ऑनलाइन किए जाएंगे।

5. ए. एस. सी. ने 3.9.2016 पर प्राप्त विभिन्न शिकायतों का संज्ञान लेने के बाद केरल के निजी मेडिकल कॉलेजों को 4.8.2016 पर उसके द्वारा जारी निर्देशों का पालन करने का निर्देश जारी किया। यह भी उल्लेख किया गया था कि कोई भी छात्र जिसका प्रवेश किया गया था

ए. एस. सी. द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन केरल स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय (के. यू. एच. एस.) द्वारा पंजीकृत नहीं किया जाएगा। 6.9.2016 और 9.9.2016 पर, ए. एस. सी. ने कन्नूर और करुणा मेडिकल कॉलेजों द्वारा प्रस्तुत विवरण-पत्र के संबंध में आदेश पारित किए, जिसमें विवरण-पत्र को इस अपवाद के अधीन मंजूरी दी गई कि विभिन्न न्यास संघों के आश्रितों के लिए प्रबंधन कोटे के तहत सीटों का आरक्षण था

कानून में अस्थिर और छात्रों को प्रवेश देते समय लागू नहीं किया जा सकता था। उसी पर सवाल उठाते हुए कहा कि मेडिकल कॉलेजों ने डब्ल्यू. पी. No.30697/2016 दाखिल किया। और डब्ल्यू. पी. [सी] केरल उच्च न्यायालय में No.30712/2016। ए. एस. सी. ने दिनांक 10.9.2016 के आदेश के माध्यम से पाया कि मेडिकल कॉलेजों द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण असंतोषजनक था और प्रॉस्पेक्टस की मंजूरी को संशोधित करने का निर्णय लिया और उपरोक्त मेडिकल कॉलेजों के लिए एक संशोधित प्रवेश अनुसूची जारी की, जिसके तहत ऑनलाइन आवेदन जमा करने की तारीख को संशोधित किया गया और इसे 19.9.2016 तक बढ़ा दिया गया।

6. जाँच करने के बाद, ए. एस. सी. ने कन्नूर मेडिकल कॉलेज के संबंध में दिनांक 15.9.2016 पर एक आदेश जारी किया जिसमें कहा गया कि

चिकित्सा महाविद्यालय द्वारा निर्देशित ऑनलाइन आवेदन नहीं बुलाए गए थे ए. एस. सी. ने अपने दिनांकित 10.9.2016 आदेश द्वारा निर्देश दिया कि किए गए प्रवेश, यदि कोई हों, रद्द कर दिए जाएंगे।

7. ए. एस. सी. ने जांच करने के बाद एक और आदेश पारित किया

15.9.2016 करुणा मेडिकल कॉलेज के संबंध में और यह अभिनिर्धारित किया कि ऑनलाइन के लिए पोर्टल 6.9.2016 पर बंद कर दिया गया था और इसके द्वारा दिनांकित 10.9.2016 आदेश में पारित निर्देशों का उल्लंघन किया गया था जिसमें ऑनलाइन आवेदन जमा करने की संशोधित तिथि 19.9.2016 तक थी। ए. एस. सी. ने केरल राज्य में स्थित सभी मेडिकल कॉलेजों को संबोधित एक और आदेश पारित किया, उसके द्वारा जारी निर्देशों को दोहराया गया और यह भी निर्देश दिया गया कि निर्देशों को तुरंत मेडिकल कॉलेजों की वेबसाइट पर रखा जाए। 19.9.2016 पर ए. एस. सी. ने

कॉलेजों को समय-समय पर जारी किए गए निर्देशों का सख्ती से पालन करते हुए सभी प्रवेश आयोजित करने का निर्देश दिया।

भारत की चिकित्सा परिषद v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

8. केरल उच्च न्यायालय ने मेडिकल कॉलेजों द्वारा दायर उपरोक्त रिट याचिकाओं में पारित अपने दिनांक 23.9.2016 के आदेश द्वारा

प्रबंधन के आरक्षण के संबंध में ए. एस. सी. द्वारा लिया गया निर्णय कोटा सीटें जो विभिन्न न्यास संघों के आश्रितों के लिए आरक्षित थीं, और रिट याचिकाओं को लंबित रखते हुए विभिन्न अंतरिम निर्देश जारी किए। इस न्यायालय में एसएलपी [सी] CC.Nos में दिनांकित 23.9.2016 आदेश पर सवाल उठाया गया था। 19387-88 / 2016 - केरल राज्य बनाम। सुरक्षित

विकास भिक्षा मेलामुरी और अन्य। जिन्हें खारिज कर दिया गया और इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय से मुख्य रिट याचिका पर जल्द से जल्द निर्णय लेने का अनुरोध किया।

9. यह न्यायालय सी. ए. No.9862/2016-भारत संघ बनाम में पारित दिनांक 28.9.2016 आदेश के माध्यम से। श्री नारायण आयुर्विज्ञान संस्थान

& ओआरएस। केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम निर्देश को दरकिनार कर दिया जिसने केरल राज्य में निजी चिकित्सा महाविद्यालयों को अपनी स्वयं की परामर्श प्रक्रिया आयोजित करने की अनुमति दी और शैक्षणिक वर्ष के लिए एमबीबीएस पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए केंद्रीकृत परामर्श आयोजित करने का निर्देश दिया। चूंकि अंतिम तिथि बंद कर दी गई थी, इसलिए इस न्यायालय ने 30.9.2016 पर CA No.9862/2016-भारत संघ बनाम में एक आदेश पारित किया। श्री नारायण आयुर्विज्ञान संस्थान और अन्य। (उपर्युक्त) और आदेश का पालन करने के लिए एमबीबीएस पाठ्यक्रम में प्रवेश की अंतिम तिथि 30 सितंबर से बढ़ाकर 7 अक्टूबर 2016 कर दी गई।

10. ए. एस. सी. द्वारा 2.10.2016 पर अलग-अलग आदेश पारित किए गए थे जिसमें यह देखा गया था कि प्रतिवादी-मेडिकल कॉलेजों ने जानबूझकर अपने दिनांकित 4.8.2016,3.9.2016,4.9.2016,10.9.2016,17.9.2016 और 19.9.2016 द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन किया है। ए. एस. सी. ने शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के लिए एम. बी. बी. एस. पाठ्यक्रम में प्रतिवादी मेडिकल कॉलेजों द्वारा किए गए सभी प्रवेशों को रद्द कर दिया। दिनांक 2.10.2016 के आदेश से व्यथित होकर प्रत्यर्थी मेडिकल कॉलेजों ने केरल उच्च न्यायालय में W. P. Nos.32186/2016 और 32185/2016 दायर किया। केरल उच्च न्यायालय ने अपने दिनांकित आदेश 6.10.2016 के माध्यम से प्रत्यर्थी मेडिकल कॉलेजों को प्रवेश प्रक्रिया से संबंधित सभी प्रासंगिक रिकॉर्ड प्रवेश परीक्षा आयुक्त के समक्ष रखने का निर्देश दिया। सत्यापन के लिए। यह भी निर्देश दिया गया कि अभिलेखों के सत्यापन के बाद सी. ई. ई. अंतर-योग्यता के आधार पर सीटों के आवंटन को सख्ती से अंतिम रूप देगा और इसे 7.10.2016 द्वारा पूरा करेगा।

11. आई. डी. 1 पर कन्नूर मेडिकल कॉलेज ने केरल उच्च न्यायालय के समक्ष एक बयान दिया कि कोई भी छात्र सी. ई. ई. [2018] 10 एस. सी. आर. के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ।

अपने कॉलेज में प्रवेश चाहते हैं। आई. डी. 1 पर प्रवेश परीक्षा आयुक्त (सी. ई. ई.) ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए निष्कर्ष निकाला कि करुणा मेडिकल कॉलेज द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया त्रुटिपूर्ण थी और 30 छात्रों को प्रवेश देते समय उसके द्वारा भौतिक अनियमितताएं की गई थीं। जहाँ तक कन्नूर मेडिकल कॉलेज का संबंध है, उक्त कॉलेज का प्रतिनिधि सुबह लगभग 11.30 पर CEE के समक्ष उपस्थित हुआ और रिकॉर्ड प्रस्तुत करने के बाद 12.10 शाम तक चला गया। मेडिकल कॉलेज के प्रतिनिधियों द्वारा कोई स्पष्टीकरण या स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था, और आचरण को सीईई द्वारा नोट किया गया था। कॉलेज का प्रतिनिधि होने का दावा करने वाला व्यक्ति कॉलेज के अधिकारियों से प्राधिकरण का पत्र प्रस्तुत करने के लिए कहे जाने पर तुरंत चला गया।

12. केरल उच्च न्यायालय ने निर्णय और अंतिम आदेश दिनांक 1 के माध्यम से कन्नूर मेडिकल कॉलेज द्वारा किए गए 150 और करुणा मेडिकल कॉलेज द्वारा 'स्पॉट परामर्श' के माध्यम से किए गए 30 प्रवेशों को रद्द कर दिया। केरल उच्च न्यायालय ने आगे ए. एस. सी. को निर्देश दिया

दोनों मेडिकल कॉलेजों के छात्रों द्वारा किए गए प्रतिद्वंद्वी दावों का निर्णय करना, जिन्हें भर्ती किया गया था और साथ ही अन्य योग्य छात्रों द्वारा किए गए दावे जो अदालत के समक्ष पक्षकार थे। 13. ए. एस. सी. ने 14.11.2016 दिनांकित एक तर्कपूर्ण आदेश पारित किया जिसके तहत उसने कन्नूर मेडिकल कॉलेज और ए. एस. सी. में किए गए 150 प्रवेशों को रद्द कर दिया।

यह देखा गया है कि आवेदन ऑनलाइन प्राप्त नहीं किए गए थे:

" 13. ए. एस. सी. ने मेडिकल कॉलेज द्वारा प्रस्तुत 'ऑनलाइन आवेदन' की जांच की है। यहां तक कि आवेदन को एक सरसरी नज़र से भी पता चलता है कि वे वास्तविक 'ऑनलाइन आवेदन' नहीं हैं। फॉर्म में उस मेडिकल कॉलेज का नाम नहीं दिखाया गया है, जिसके लिए आवेदन किए गए थे। इसमें आवेदक की तस्वीर नहीं है। आवेदक के कोई डिजिटल या स्कैन किए हुए हस्ताक्षर नहीं हैं। आवेदन की कोई तिथि नहीं है। कुल मिलाकर, जमा किए गए आवेदन केवल यह दर्शाते हैं कि वे ऑनलाइन आवेदन प्रणाली का दावा करने के प्रयास के रूप में एएससी के समक्ष जमा करने के उद्देश्य से तैयार किए गए हैं। यहां तक कि माननीय उच्च न्यायालय के अंतरिम आदेश के अनुसार, 07.10.2016 पर CEE के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ भी, इन आवेदनों को विचार के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया था, जैसा कि CEE द्वारा बताया गया था।

14. आई. डी. 2 पर, प्रत्यर्थी मेडिकल कॉलेजों यानी करुणा मेडिकल कॉलेज के साथ-साथ कन्नूर मेडिकल कॉलेज और ट्रस्ट-सेफ डेवलपमेंट एल्म्स ट्रस्ट और प्रेस्टीज मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया के मामले में केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित सामान्य निर्णय से व्यथित।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

एजुकेशनल ट्रस्ट ने इस न्यायालय के समक्ष एसएलपी [सी] Nos.32580-81/2016 और 35374-75/2016 दायर किया। एमसीआई ने एसएलपी [सी] संख्या भी दाखिल की। 3882/2017 और 3952/2017 . छात्रों ने भी फैसले के खिलाफ इस अदालत में याचिका दायर की

और केरल उच्च न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया। महाविद्यालयों और छात्रों द्वारा दायर किए गए मामले में, ए. एस. सी. द्वारा दिनांकित 14.11.2016 के आदेश पर भी सवाल उठाया गया था और इस न्यायालय ने पक्षों के विद्वान वकील को एक साथ कई दिनों तक सुनने के बाद और उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए रिकॉर्ड को देखने के बाद, दिनांकित 14.11.2016 के आदेश में हस्तक्षेप करना उचित नहीं पाया। महाविद्यालयों ने उन दस्तावेजों को भी प्रस्तुत किया जिन्हें उन्होंने सी. ई. ई./ए. एस. सी. के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया और सभी दस्तावेजों की जांच करने के बाद, इस न्यायालय ने दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से मामले में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया। इस न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि जो 30 छात्र योग्य पाए गए थे, लेकिन करुणा मेडिकल कॉलेज में प्रवेश से वंचित थे, उन्हें अगले शैक्षणिक सत्र यानी 2017-18 में समायोजित किया जाएगा और प्रवेश के लिए उक्त सत्र के लिए सीटों की संख्या को कम किया जाएगा। समीक्षा याचिकाएं भी दायर की गईं जिन्हें इस अदालत ने 2.5.2017 पर खारिज कर दिया था।

15. उपरोक्त विवाद के फैसले से शांत होने के बाद

इस न्यायालय की ओर से, राज्य सरकार ने 20.10.2017 पर विवादित अध्यादेश को अधिसूचित किया, जिसके तहत उक्त मेडिकल कॉलेजों में वर्ष 2016-17 में अवैध रूप से एमबीबीएस पाठ्यक्रम में प्रवेश पाने वाले छात्रों के प्रवेश को नियमित करने की मांग की गई थी। केरल सरकार द्वारा जारी अध्यादेश का सार नीचे दिया गया है:

" केरल पेशेवर महाविद्यालय

कॉलेज) आदेश, 2017)

भारत गणराज्य के साठ-आठवें वर्ष में केरल के राज्यपाल द्वारा घोषित

एएन

व्यवस्था

छात्रों के प्रवेश को नियमित करने का प्रावधान करना शैक्षणिक वर्ष के दौरान राज्य के कुछ मेडिकल कॉलेज

2016-17

प्रस्तावना-जबकि, शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के लिए चिकित्सा के विषय में कुछ छात्रों का प्रवेश [2018] 10 एस. सी. आर. था।

कुछ प्रबंधनों द्वारा अपने आदेशों का पालन न करने के लिए राज्य की प्रवेश पर्यवेक्षी समिति द्वारा रद्द किया गया; और जहां ऐसे महाविद्यालयों में प्रवेश पाने वाले किसी भी छात्र की ओर से कोई गलती नहीं पाई गई;

और जहाँ इस तरह से रद्द की गई सीटें किसी अन्य छात्र को आवंटित नहीं की जाती हैं;

और चूंकि, शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के दौरान राज्य के ऐसे मेडिकल कॉलेजों में छात्रों के प्रवेश को नियमित करने का प्रावधान करना समीचीन है;

और जहाँ तक, केरल राज्य की विधानसभा का सत्र नहीं चल रहा है और केरल के राज्यपाल संतुष्ट हैं कि ऐसी परिस्थितियाँ हैं जो उनके लिए तत्काल कार्रवाई करना आवश्यक बनाती हैं;

अब, इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 214 के खंड (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केरल के राज्यपाल निम्नलिखित अध्यादेश जारी करते हैं: - भारत गणराज्य के साठ-आठवें वर्ष में इसे निम्नानुसार अधिनियमित किया जाए: -

I संक्षिप्त शीर्षक और प्रारंभ-(1) इस अध्यादेश को केरल व्यावसायिक महाविद्यालय (चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रवेश का नियमितीकरण) अध्यादेश, 2017 कहा जा सकता है।

2. चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रवेश को नियमित करना। केरल प्रोफेशनल में कुछ भी शामिल होने के बावजूद

महाविद्यालय या संस्थान (कैपिटेशन शुल्क का निषेध, प्रवेश का विनियमन, गैर-शोषण शुल्क का निर्धारण और व्यावसायिक शिक्षा में समानता और उत्कृष्टता सुनिश्चित करने के लिए अन्य उपाय) अधिनियम, 2006 (2006 का 19) या किसी भी निर्णय, डिक्री, आदेश या किसी भी अदालत की किसी भी कार्यवाही में या उक्त अधिनियम की धारा 4 के तहत गठित प्रवेश पर्यवेक्षी समिति या किसी अन्य प्राधिकरण या उस समय लागू किसी कानून के तहत किए गए किसी भी समझौते या साधन में, सरकार के लिए उन उम्मीदवारों के प्रवेश को नियमित करना वैध होगा जो भारत की डी. आई. सी. ए. एल. परिषद में किसी भी मेडिकल कॉलेज में चिकित्सा के विषय में प्रवेश के लिए योग्य थे।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

राज्य ने शैक्षणिक वर्ष के दौरान, लेकिन आवेदन जमा करने के तरीके और प्रवेश पर्यवेक्षी समिति के समक्ष किसी भी सामग्री को प्रस्तुत न करने की परवाह किए बिना, किसी भी अदालत या प्रवेश पर्यवेक्षी समिति द्वारा उनका प्रवेश रद्द कर दिया गया था, जो ऐसे नियमों और शर्तों के अधीन था जो सरकार उचित समझे:

बशर्ते कि इस तरह के प्रवेश को तब तक नियमित नहीं किया जाएगा जब तक कि ऐसे उम्मीदवार ने उक्त अवधि के दौरान पाठ्यक्रम में विधिवत भाग नहीं लिया हो।

शैक्षणिक वर्ष।

3. नियमितीकरण की प्रक्रिया। - (1) जिन मेडिकल कॉलेजों के प्रबंधन ने किसी भी मेडिकल कॉलेज में चिकित्सा के विषय में धारा 2 में निर्दिष्ट उम्मीदवारों को प्रवेश दिया है और उनका प्रवेश रद्द कर दिया गया है, वे इस अध्यादेश के शुरू होने की तारीख से पंद्रह दिनों के भीतर ऐसे प्रवेश को नियमित करने के लिए आवेदन कर सकते हैं।

(2) इस अध्यादेश के तहत प्रवेश को नियमित करने के लिए प्रत्येक आवेदन के माध्यम से सरकार को प्रस्तुत किया जाएगा संबंधित विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय, इस तरह के आवेदन की प्राप्ति के सात दिनों के भीतर, इसे निम्नलिखित मामलों पर अपनी टिप्पणियों वाली एक रिपोर्ट के साथ सरकार को भेजेंगे, अर्थात्: -

(i) क्या प्रवेश पाने वाला छात्र योग्य है और राष्ट्रीय स्तर पर तैयार की गई श्रेणी सूची के अनुसार पात्र है।

शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के लिए लागू कानूनों और आदेशों के अनुसार चिकित्सा के विषय में प्रवेश के लिए पात्रता सह प्रवेश परीक्षा; (ii) क्या आवेदन में उल्लिखित छात्रों ने शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के दौरान पाठ्यक्रम में विधिवत भाग लिया है;

(iii) क्या छात्र अन्यथा जारी रखने के लिए पात्र है

बेशक।

(3) सरकार के सचिव के पद से कम का अधिकारी, जिसे सरकार द्वारा इस संबंध में विशेष आदेश द्वारा अधिकृत किया जा सकता है, इस अध्यादेश के तहत आवेदन पर विचार करने के लिए सक्षम प्राधिकारी होगा। सक्षम प्राधिकारी के पास किसी भी व्यक्ति को बुलाने या ऐसे आवेदन के उचित निपटान के लिए किसी भी दस्तावेज को बुलाने की शक्ति होगी।

एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

(4) इस धारा के तहत नियमितीकरण के लिए आवेदन प्राप्त होने पर, सरकार चिकित्सा शिक्षा निदेशक से इस पर एक रिपोर्ट मांगेगी और आवेदक और प्रतिवादियों या किसी अन्य संबंधित व्यक्ति को सुनने के बाद, यदि आवश्यक हो, तो आवेदन पर विचार करेगी और उस पर आदेश पारित करेगी, जिसमें इस अध्यादेश के तहत देय नियमितीकरण शुल्क के भुगतान का आदेश भी शामिल है। (5) जहां आवेदन सरकार द्वारा स्वीकृत किया जाता है, इस संबंध में एक निर्देश संबंधित विश्वविद्यालय को जारी किया जाएगा और किसी विश्वविद्यालय अधिनियम या उसके तहत बनाए गए किसी कानून या अध्यादेश या किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, विश्वविद्यालय आवश्यक आदेश जारी करेगा।

विश्वविद्यालय में ऐसे छात्रों के नामांकन के लिए और उसके बाद ऐसे छात्रों को शैक्षणिक वर्ष से लेकर विषय में अपना पाठ्यक्रम पूरा होने तक विश्वविद्यालय के तहत चिकित्सा के विषय के नियमित छात्र के रूप में माना जाएगा। स्पष्टीकरण। - इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "विश्वविद्यालय अधिनियम" का अर्थ है राज्य विधानमंडल द्वारा पारित विश्वविद्यालय की स्थापना करने वाला अधिनियम।

4. सक्षम प्राधिकारी के विचार के लिए मामले। -

अध्यादेश के तहत प्राप्त नियमितीकरण के लिए आवेदन पर विचार करते समय, सक्षम प्राधिकारी -

(i) इस बात पर विचार करें कि क्या प्रवेश पाने वाला छात्र योग्य है और राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा के आधार पर तैयार की गई रैंक सूची के अनुसार, शैक्षणिक वर्ष के लिए लागू कानूनों और आदेशों के अनुसार चिकित्सा के विषय में प्रवेश के लिए पात्र है।

((ii) इस बात की पुष्टि करें कि कोई भी छात्र वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून का उल्लंघन करते हुए कॉलेज में नहीं रह रहा है।

((ग) छात्रों द्वारा प्रस्तुत आवेदन के तरीके पर विचार न करें।

(iv) प्रवेश पर्यवेक्षी समिति के समक्ष किसी भी दस्तावेज या किसी भी सामग्री को प्रस्तुत न करने पर विचार न करें; भारत की चिकित्सा परिषद v.

यह सुनिश्चित करें कि प्रबंधन द्वारा कोई कैपिटेशन शुल्क नहीं लिया गया था;

(vi) यह सुनिश्चित करें कि प्रबंधन द्वारा कोई मुनाफाखोरी न हो।

5. नियमितीकरण शुल्क का भुगतानः - (1) जहां सरकार इस अध्यादेश के तहत प्रवेश के नियमितीकरण के लिए एक आवेदन को मंजूरी देती है, ऐसे मेडिकल कॉलेज का प्रबंधन इस तरह के नियमितीकरण के लिए प्रति छात्र तीन लाख रुपये का नियमितीकरण शुल्क देने के लिए उत्तरदायी होगाः

बशर्ते कि जहां कोई प्रबंधन किसी छात्र से ऐसा शुल्क एकत्र करता है, वहां ऐसा प्रबंधन प्रति छात्र छह लाख रुपये का जुर्माना देने के लिए उत्तरदायी होगा। (2) धारा 3 की उप-धारा (3) के तहत सक्षम प्राधिकारी उप-धारा (1) में दिए गए शुल्क को लागू करने के लिए सक्षम होगा और यह धारा 3 की उप-धारा (3) के तहत जारी आदेश में निर्दिष्ट किया जाएगा।

तिथि 20.10.2017

गवर्नर "

16. श्री विकास सिंह, विद्वान वरिष्ठ वकील

एमसीआई ने आग्रह किया कि अध्यादेश राज्य सरकार की शक्तियों से परे है और इस न्यायालय के विभिन्न संविधान पीठ के फैसलों के विपरीत है, जिन पर उन्होंने भरोसा किया है। उन्होंने आगे कहा कि अध्यादेश द्वारा निर्णय को रद्द कर दिया गया है। ऐसा नहीं है कि जिन कानूनों को हटाया गया है, उनमें कोई कमी या दोष था। वहाँ एक है

पूरी सामग्री अदालत में दायर की गई थी जिसे पेश भी नहीं किया गया था एएससी/सीईई से पहले। इस न्यायालय ने कई दिनों तक सुनवाई की और पूरी तरह से असंबद्ध होने पर, विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज कर दिया और स्पष्ट रूप से कहा कि एएससी द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेश में हस्तक्षेप का कोई मामला नहीं बनाया गया था और आगे 30 छात्रों के प्रवेश का निर्देश दिया जो अवैध रूप से वंचित थे। जनपद सभा छिंदवाड़ा बनाम में इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसलों को देखते हुए राज्य के पास किसी फैसले को रद्द करने की कोई विधायी शक्ति नहीं है। केंद्रीय [2018] 10 एस. सी. आर.

प्रांत सिंडिकेट लिमिटेड और ए. एन. आर. (1970) 1 एस. सी. सी. 509, बेलगाम गार्डनर्स कोऑपरेटिव प्रोडक्शन सप्लाई एंड सेल सोसाइटी लिमिटेड। कर्नाटक राज्य (1993) सप. 1 एस. सी. सी. 96, और तमिलनाडु राज्य और अन्य। वी. केरल राज्य और अन्य। (2014) 12 एससीसी 696।

17. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकीलों के एक समूह ने इस बात पर जोर दिया है कि विवादित अध्यादेश का उद्देश्य

एन. ई. ई. टी. परीक्षा में प्रदर्शन के आधार पर योग्यता के आधार पर प्रवेश दिए जाने हैं। इस प्रकार, यह जांच करने के लिए अध्यादेश लागू करने की अनुमति थी कि क्या उम्मीदवार एन. ई. ई. टी. परीक्षा में अपनी योग्यता के आधार पर प्रवेश के लिए पात्र थे। यह भी तर्क दिया गया कि केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित ऑनलाइन आवेदनों का आदेश था

सहमति के आधार पर। इसलिए, इसे न्यायिक समीक्षा में अदालत द्वारा पारित आदेश नहीं कहा जा सकता है। निर्णय नहीं लिया गया न्यायिक पूर्ववर्ती का प्रभाव जिसे अध्यादेश के माध्यम से निरस्त कहा जा सकता है। यह भी तर्क दिया गया कि अंततः यह छात्रों की गलती नहीं थी और यदि मेडिकल कॉलेजों द्वारा कोई प्रक्रियात्मक उल्लंघन किया गया था, तो छात्रों को बलि का बकरा नहीं बनाया जा सकता था या बिना उनकी गलती के पीड़ित नहीं किया जा सकता था। ए. एस. सी. या सी. ई. ई. ने उनकी बात नहीं सुनी। यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकता है और अध्यादेश में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है जैसा कि तथ्यों और परिस्थितियों, नियमितीकरण में है।

प्रवेश की स्पष्ट रूप से अनुमति थी। यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य सरकार ने न्यायिक समीक्षा की शक्ति को हड़पने का प्रयास किया है। 18. अध्यादेश को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका उद्देश्य शैक्षणिक सत्र के दौरान छात्रों के प्रवेश को नियमित करना है।

वर्ष 2016-17 जिसे ए. एस. सी., उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा केवल दो कॉलेजों और छात्रों को लाभान्वित करने के लिए अलग रखा गया था। इसमें यह भी कहा गया है कि केरल राज्य की विधानसभा का सत्र नहीं चल रहा है और केरल के राज्यपाल संतुष्ट हैं, परिस्थितियों ने उनके लिए तत्काल कार्रवाई करना आवश्यक बना दिया है। शक्ति के प्रयोग में भारत के संविधान के अनुच्छेद 213 के खंड (1) के तहत प्रदान किए गए केरल के राज्यपाल ने विवादित अध्यादेश को जारी किया है।

19. अध्यादेश के खंड 2 में यह प्रावधान किया गया है कि केरल व्यावसायिक महाविद्यालयों या संस्थानों में कुछ भी निहित होने के बावजूद

(भारत की चिकित्सा परिषद में समानता और उत्कृष्टता सुनिश्चित करने के लिए कैपिटेशन शुल्क का निषेध, प्रवेश का विनियमन, गैर-शोषण शुल्क का निर्धारण और अन्य उपाय।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

व्यावसायिक शिक्षा) अधिनियम, 2006 या किसी भी निर्णय, डिक्री, आदेश या किसी भी अदालत या प्रवेश पर्यवेक्षी समिति या किसी अन्य प्राधिकरण की किसी भी कार्यवाही में या इसके तहत किए गए किसी भी समझौते या दस्तावेज में तत्काल प्रभाव से लागू कोई भी कानून, सरकार के लिए उन उम्मीदवारों के प्रवेश को नियमित करना वैध होगा जो इसके लिए योग्य थे।

किसी भी मेडिकल कॉलेज में चिकित्सा के विषय में प्रवेश

विचाराधीन शैक्षणिक वर्ष के दौरान राज्य, हालांकि उनके प्रवेश किसी भी अदालत या ए. एस. सी. द्वारा रद्द कर दिए गए थे, और आवेदन जमा करने के तरीके और ए. एस. सी. के समक्ष किसी भी सामग्री को प्रस्तुत न करने की परवाह किए बिना।

20. विवादित अध्यादेश के खंड 3 में नियमितीकरण की प्रक्रिया शामिल है। खंड 3 (1) के तहत छात्र अध्यादेश के शुरू होने के 15 दिनों के भीतर इसे नियमित करने के लिए आवेदन कर सकते हैं।

इस तरह की स्वीकृति। खंड 3 (2) के तहत, आवेदन विश्वविद्यालय के माध्यम से सरकार को इस टिप्पणी के साथ प्रस्तुत किया जाएगा कि क्या

छात्र योग्य था, कानून के अनुसार चिकित्सा के विषय में प्रवेश के लिए एन. ई. ई. टी. के आधार पर तैयार की गई रैंक सूची के अनुसार पात्र था।

और शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के लिए लागू आदेश; क्या उसने शैक्षणिक वर्ष 2016-17 के दौरान पाठ्यक्रम में भाग लिया है और क्या छात्र अन्यथा पाठ्यक्रम जारी रखने के लिए पात्र था। खंड 3 (4) सरकार को आवेदन पर विचार करने और उस पर आदेश पारित करने में सक्षम बनाता है, जिसमें नियमितीकरण शुल्क के भुगतान का आदेश भी शामिल है।

अध्यादेश और खंड 3 (5) में प्रावधान है कि जहां आवेदन है

सरकार द्वारा स्वीकृत, छात्र को इस विषय में अपना पाठ्यक्रम पूरा होने तक शैक्षणिक सत्र 2016-17 से नियमित छात्र माना जाएगा। खंड 3 (4) (i) इस मामले में विचार करने का प्रावधान करता है कि उम्मीदवार निम्नलिखित के आधार पर तैयार की गई रैंक सूची के अनुसार पात्र था: एन. ई. ई. टी., और कोई भी छात्र उस समय लागू किसी अन्य कानून का उल्लंघन करते हुए कॉलेज में नहीं रह रहा था। खंड 4 (iii) में छात्रों द्वारा आवेदन जमा करने के तरीके के बावजूद नियमितीकरण का प्रावधान किया गया है। इस तरह के नियमितीकरण के लिए प्रति छात्र 3 लाख रुपये का नियमितीकरण शुल्क देना था।

21. राज्य सरकार द्वारा विवादित अध्यादेश द्वारा जो किया गया है, वह स्पष्ट रूप से न्यायिक समीक्षा के क्षेत्र में निहित है और यह

जाहिर तौर पर दुस्साहस का सहारा लिया गया था। हमारी सुविचारित राय में, राज्य सरकार को यह घोषणा करने की अनुमति नहीं थी कि मामले में अध्यादेश/विधान। न केवल अदालत का फैसला [2018] 10 एस. सी. आर. है।

रद्द कर दिया गया और प्रवेश में की गई मनमानी स्पष्ट थी, और

केरल उच्च न्यायालय का निर्णय, जिसे इस न्यायालय द्वारा उन आवेदनों के संबंध में पुष्टि की गई थी जिन पर विचार किया जाना था यदि वे ऑनलाइन आवेदन थे, तो उन्हें रद्द कर दिया गया है। यह स्पष्ट रूप से निर्णय को रद्द करने का एक कार्य था और न्यायपालिका में निहित न्यायिक शक्तियों का उल्लंघन है। राज्य सरकार केरल उच्च न्यायालय या इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय/आदेशों को रद्द करने के लिए तैयार नहीं थी। यह हटाने का मामला नहीं था

मौजूदा कानून में एक दोष। इस न्यायालय के विभिन्न संविधान पीठ के फैसलों ने इस क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानून के सिद्धांतों को तय किया है। यह गुजर जाता है।

यह समझना कि राज्य सरकार ने किस तरह से इस अध्यादेश को लागू किया है।

22. जनपद सभा में छिंदवाड़ा बनाम। द सेंट्रल प्रोविंस सिंडिकेट लिमिटेड और अन्र। 1970 (1) एस. सी. सी. 509, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा है कि यह किसी निर्णय को अप्रभावी बनाने के लिए कानून बनाने के लिए खुला नहीं है। यह विधानमंडल के लिए कुछ सीमाओं के भीतर किसी अधिनियम के प्रावधानों को पूर्वव्यापी रूप से संशोधित करने और यह घोषित करने के लिए खुला है कि कानून क्या माना जाएगा, लेकिन यह विधानमंडल के लिए कहने के लिए खुला नहीं है। कि विधि की व्याख्या न्यायालय द्वारा घोषित व्याख्या से भिन्न होगी। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की है:

राज्य सरकार की मंजूरी के बिना जारी अधिसूचनाओं को स्थानीय सरकार की मंजूरी के बिना धारा 51 (2) के तहत वैध रूप से जारी किया गया माना जाना चाहिए। अधिनियम में उपयोग किए गए शब्दों पर, यह स्पष्ट है कि विधानमंडल ने इस न्यायालय के निर्णय को रद्द करने या रद्द करने का प्रयास किया। यह, हमारे निर्णय में, हमारी संवैधानिक योजना के तहत करने के लिए विधानमंडल के लिए खुला नहीं है। यह कुछ सीमाओं के भीतर विधानमंडल के लिए संशोधन करने के लिए खुला है किसी अधिनियम के प्रावधानों को पूर्वव्यापी रूप से और यह घोषित करने के लिए कि कानून क्या माना जाएगा, लेकिन यह विधानमंडल के लिए यह कहने के लिए खुला नहीं है कि उसके समक्ष लाए गए मामले में अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उचित रूप से गठित और प्रदत्त न्यायालय का निर्णय अप्रभावी माना जाएगा और कानून की व्याख्या अदालत द्वारा घोषित किए गए निर्णय से भिन्न होगी।

23. कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण (1993) के मामले में उप. 1 एस. सी. सी. 96 (II), इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा है कि यह आधार को बदलकर सामान्य रूप से कानून को बदलने के लिए खुला है, लेकिन यह भारत की डी. आई. सी. ए. एल. परिषद v है।

एकतरफा व्यक्तिगत निर्णय को अलग रखने के लिए कलम लगाना और इस प्रकार केवल अधिकारों और देनदारियों को प्रभावित करता है। विधायिका की ओर से ऐसा कार्य न्यायिक शक्ति का प्रयोग करता है। इस अदालत ने खारिज कर दियानैन्स ने कहा कि अध्यादेश जारी करके अटाका राज्य ने कानून को अपने हाथ में लेने की कोशिश की है और कानून बनने की कोशिश की है। इस तरह का कार्य अराजकता और छल के लिए एक खुला निमंत्रण है। न्यायिक निर्णय की अवज्ञा नहीं की जा सकती है।

रियायतें। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की है:

" 76. इन प्राधिकरणों से जो सिद्धांत उभरता है वह यह है कि विधायिका उस आधार को बदल सकती है जिसके आधार पर न्यायालय द्वारा निर्णय दिया जाता है और इस प्रकार सामान्य रूप से कानून को बदल सकता है, जो बड़े पैमाने पर व्यक्तियों और घटनाओं के एक वर्ग को प्रभावित करेगा। हालाँकि, यह पक्षों के बीच एक व्यक्तिगत निर्णय को अलग नहीं कर सकता है और केवल उनके अधिकारों और देनदारियों को प्रभावित नहीं कर सकता है। विधायिका की ओर से ऐसा अधिनियम

राज्य की न्यायिक शक्ति का प्रयोग करना और

अपीलीय न्यायालय या न्यायाधिकरण के रूप में कार्य करना।

77. वर्तमान की धारा 11 के प्रावधानों का प्रभाव

अधिनियम, अर्थात। संविधान के अनुच्छेद 262 के साथ पठित अंतर-राज्य जल विवाद अधिनियम यह है कि राज्य और इसलिए किसी भी अंतरराज्यीय नदी या नदी घाटियों में पानी के उपयोग, वितरण या नियंत्रण के संबंध में मूल विवाद या शिकायत पर निर्णय लेने के लिए सर्वोच्च न्यायालय सहित न्यायालयों को उक्त अधिनियम की धारा 4 के तहत नियुक्त न्यायाधिकरण में निहित किया गया है। इसलिए यह संभव नहीं है कि

इस दलील को स्वीकार करें कि अंतरिम राहत देने का सवाल इस दलील से बाहर है कि अंतरिम राहत देने का सवाल उक्त प्रावधानों के दायरे से बाहर है और इसे संविधान के अनुच्छेद 131 के तहत उठाया जा सकता है। अत: किसी राज्य का कोई कार्यकारी आदेश या विधायी अधिनियम जो ऐसे न्यायाधिकरण द्वारा न्यायिक प्रक्रिया और निर्णय में हस्तक्षेप करता है, राज्य की न्यायिक शक्ति में हस्तक्षेप है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि विचाराधीन अध्यादेश 25 जून, 1991 को पारित न्यायाधिकरण के आदेश को सीधे रद्द करने का प्रयास करता है, यह राज्य की न्यायिक शक्ति पर प्रभाव डालता है और इसलिए, इसके अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

संविधान।

78. इसके अलावा, यह माना जा सकता है कि अध्यादेश का प्रभाव [2018] 10 एस. सी. आर. के क्षेत्र में कावेरी नदी के पानी के प्रवाह को प्रभावित करना है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

तमिलनाडु और पांडिचेरी जो निचले नदी तटीय राज्य हैं।

इसलिए, इस अध्यादेश का एक अतिरिक्त-क्षेत्रीय संचालन है। इसलिए यह अध्यादेश राज्य की विधायी क्षमता से परे है और संविधान के अनुच्छेद 245 (1) के प्रावधानों से परे है।

संविधान।

79. अध्यादेश नियम के मूल सिद्धांतों के खिलाफ भी है।

कर्नाटक राज्य द्वारा जारी किया गया कानून

अध्यादेश ने कानून को अपने हाथ में लेने और कानून से ऊपर होने का प्रयास किया है। इस तरह का कार्य अराजकता और अराजकता के लिए एक निमंत्रण है, क्योंकि अध्यादेश राज्य की ओर से अपने हित में न्यायाधीश बनने और न्यायिक अधिकारियों के निर्णयों की अवहेलना करने की इच्छा की अभिव्यक्ति है। यह कार्रवाई संविधान के तहत संघीय ढांचे के लिए बुरे परिणामों की भविष्यवाणी करती है और

प्रत्येक राज्य के लिए द्वार खुले हैं कि वह न केवल अन्य राज्यों के अधिकारों, संसद के एक अधिनियम के तहत गठित साधनों द्वारा पारित आदेशों, बल्कि संविधान के प्रावधानों की भी अवहेलना करते हुए उस तरह से कार्य करे जैसे वह चाहता है। यदि किसी राज्य की जारी करने की शक्ति

इस तरह के अध्यादेश को बरकरार रखा जाता है जिससे संवैधानिक तंत्र टूट जाएगा और देश की एकता और अखंडता प्रभावित होगी।

राष्ट्र "।

न्यायालय ने री में भी टिप्पणी की है: कावेरी जल विवाद नैल (ऊपर) है कि यदि न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग राज्य सरकार द्वारा उसके खिलाफ निर्णय को ओवरराइड करके शून्य नहीं किया जा सकता है, तो यह कानून के शासन की मौत की घंटी लगेगी। कानून का अर्थहीन होगा क्योंकि यह राज्य के लिए खुला होगा।

कानून की अवहेलना करना और फिर भी इसके साथ भाग जाना।

24. तमिल राज्य बनाम में फिर से इस न्यायालय की एक संविधान पीठ। केरल और अन्र राज्य। (2014) 12 एस. सी. सी. 696 ने भारतीय संविधान के तहत शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर विचार किया है।

देखा गया:

" 126. उपरोक्त चर्चा के गहन प्रतिबिंब पर, हमारी राय में, विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों के पृथक्करण से संबंधित भारतीय संविधान के संदर्भ में संवैधानिक सिद्धांतों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

126.1 शक्तियों के पृथक्करण के स्पष्ट प्रावधान के बिना भी, शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत भारत की डी. आई. सी. ए. एल. परिषद v में एक मजबूत सिद्धांत है।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

भारत का संविधान। शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत

भारतीय संवैधानिक संरचना को सूचित करता है और यह एक आवश्यक है

कानून के शासन का घटक। दूसरे शब्दों में, सत्ता के पृथक्करण का सिद्धांत हालांकि संविधान में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, लेकिन इसका विस्तार, संचालन और दृश्यता इस योजना से स्पष्ट है -

भारतीय संविधान। संविधान ने तीन अंगों-विधायिका के बीच औपचारिक रेखा खींचे बिना सीमांकन किया है।

कार्यपालिका और न्यायपालिका। उस अर्थ में, शक्तियों के पृथक्करण के लिए स्पष्ट प्रावधान के अभाव में भी, विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच की शक्तियां उन देशों के संविधानों से अलग नहीं हैं जिनमें व्यक्त अधिकार शामिल हैं।

शक्तियों के पृथक्करण का प्रावधान।

126.2 कार्यपालिका और विधायिका से अदालतों की स्वतंत्रता कानून के शासन के लिए मौलिक है और भारतीय संविधान के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है। न्यायिक शक्ति का पृथक्करण भारत के संविधान के तहत एक महत्वपूर्ण संवैधानिक सिद्धांत है।

126.3 तीन अंगों-विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण भी और कुछ नहीं बल्कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित समानता के सिद्धांतों का एक परिणाम है। तदनुसार, न्यायिक शक्ति के पृथक्करण का उल्लंघन हो सकता है

यह अनुच्छेद 14 के तहत समानता को नकारने के बराबर है। इस प्रकार कहा गया है कि ए

शक्तियों के पृथक्करण के उल्लंघन के आधार पर कानून को अमान्य किया जा सकता है क्योंकि इस तरह का उल्लंघन संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता का निषेध है।

126.4 उच्च न्यायपालिका (उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय) को संविधान द्वारा विधायिका (संसद और राज्य विधानमंडलों) द्वारा बनाए गए कानून को अमान्य घोषित करने का अधिकार है यदि यह संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन करता पाया जाता है या यदि यह संविधान के भाग III में निहित अधिकारों का उल्लंघन करता है।

126.5 शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत अंतिम पर लागू होता है

न्यायालयों के निर्णय। विधायिका किसी न्यायालय के किसी भी निर्णय को अमान्य या अप्रभावी घोषित नहीं कर सकती है। हालाँकि, यह एक द्वारा बताए गए दोषों को दूर करने के लिए एक संशोधन अधिनियम पारित कर सकता है

कानून की अदालत या इसके बारे में पता चलने पर। दूसरे शब्दों में, अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि जिन शर्तों पर यह आधारित है, उन्हें इतना मौलिक रूप से परिवर्तित नहीं किया जाता है कि परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था।

8] 10 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

126.6 यदि विधायिका के पास विषय-वस्तु पर अधिकार है और एक मान्य कानून बनाने की क्षमता है, तो वह किसी भी समय इस तरह का एक मान्य कानून बना सकती है और इसे पूर्वव्यापी बना सकती है। अत:, एक मान्यकारी कानून की वैधता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या विधायिका के पास वह क्षमता है जिसका वह विषय-वस्तु पर दावा करती है और क्या सत्यापन कानून बनाने में यह दोष को दूर करती है।

जिसे अदालतों ने मौजूदा कानून में पाया था।

126.7 विधायिका द्वारा अधिनियमित कानून स्पष्ट रूप से ऐसा प्रतीत हो सकता है

यदि इसे न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के प्रयास के रूप में दिखाया जाता है, तो ऐसी विधि को शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन होने के कारण अमान्य माना जा सकता है। ऐसी स्थिति में, विधायी प्रिस्क्रिप्शन या निर्देश को ध्यान में रखते हुए, किसी निर्णय या न्यायिक कार्यवाही पर कानून के कानूनी प्रभाव की बारीकी से जांच की जानी चाहिए। पूछे जाने वाले सवाल

ये हैं:

((i) क्या विधायी निर्देश या विधायी निर्देश न्यायिक कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं? ((ii) क्या कानून तय किए गए मामले को लक्षित करता है या क्या विवादित कानून को पहले से ही अंतिम रूप से तय किए गए मामले में लागू करने की आवश्यकता है?

(iii) कानून की शर्तें क्या हैं; जिन मुद्दों से यह निपटता है और

उस निर्णय की प्रकृति जिसने अंतिमता प्राप्त कर ली है?

यदि प्रश्न (i) और (ii) का उत्तर सकारात्मक है और प्रश्न (iii) में उल्लिखित पहलुओं पर पर्याप्त रूप से विचार किया गया है। यह
स्थापित करता है कि विवादित कानून न्यायिक कार्यों में हस्तक्षेप करता है, न्यायालय कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकता है।

इस न्यायालय ने कहा है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता कानून के शासन के लिए मौलिक है। न्यायिक शक्ति के पृथक्करण के उल्लंघन के आधार पर एक कानून को अमान्य किया जा सकता है क्योंकि इस तरह का उल्लंघन अनुच्छेद 14 के तहत समानता का निषेध है। कानून को अमान्य घोषित किया जा सकता है यदि संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन करते हुए पाया गया। विधायिका किसी न्यायालय के किसी भी निर्णय को अमान्य या अप्रभावी घोषित नहीं कर सकती है। यह अदालत द्वारा बताए गए कानून के दोषों को दूर कर सकता है या इसके बारे में पता चलने पर; अन्यथा, अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी

होना चाहिए जब तक कि वे शर्तें जिन पर यह आधारित है, वे भारत की मौलिक रूप से चिकित्सा परिषद
v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

उन्होंने कहा कि ऐसी परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था। विधायिका एक मान्य कानून बना सकती है। इस तरह से सत्यापन करने से उस दोष को दूर किया जाता है जो अदालत को मौजूदा कानून में मिलता है। न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं किया जा सकता है और इस तरह के कानून को अमान्य किया जा सकता है। जिन प्रश्नों की जांच की जानी चाहिए वे हैं: क्या विधान निर्धारित मामले को लक्षित करता है, कानून की शर्तें क्या हैं; जिन मुद्दों से यह संबंधित है और निर्णय की प्रकृति जो अंतिमता प्राप्त कर चुकी है? यदि कानून पैरा 126.7 में निर्धारित उपरोक्त परीक्षणों पर न्यायिक कार्यों में हस्तक्षेप करता है, तो न्यायालय कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकता है।

25. एस. आर. भागवत और अन्य में। बनाम मैसूर राज्य (1995) 6 एस. सी. सी. 16, कर्नाटक राज्य सिविल सेवा के प्रावधान (के विनियम)

पदोन्नति, वेतन और पेंशन) अधिनियम, 1973 इस न्यायालय के विचार के लिए आया था। धारा 11 में इस न्यायालय के निर्णयों और आदेशों को रद्द करने के प्रावधान किए गए थे जो अंतिम हो गए थे, और राज्य को ऐसे निर्णयों और आदेशों की समीक्षा करने का अधिकार देना राज्य विधानमंडल की शक्तियों में हस्तक्षेप माना गया था, और न्यायालय ने धारा 11 (2) को निरस्त कर दिया। क्योंकि राज्य की विधायी शक्तियों और धारा 4 (2), 4 (3) और 4 (8) को पढ़ा गया था, जिसमें याचिकाकर्ताओं को अदालत के फैसले के लाभों से वंचित करने की मांग की गई थी जो अंतिम हो गया था। यह भी कहा गया कि एक बार जब निर्णय अंतिम हो जाता है और राज्य के खिलाफ बाध्यकारी होता है, तो इसे किसी भी विधायी उपाय से खारिज नहीं किया जा सकता है। अदालत ने कहा कि अदालत के फैसलों को विधायिका द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता है:

" 15. हम शुरू में ही ध्यान दे सकते हैं कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने किसी भी ऐसे कानून को रद्द नहीं किया था जिसे विवादित प्रावधानों द्वारा पूर्वव्यापी रूप से किसी भी दोष को दूर करने के बाद फिर से अधिनियमित करने की मांग की गई थी। यह एक ऐसा मामला है जिसमें मौजूदा कानून की व्याख्या पर उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं को कुछ लाभ दिए थे। उस आदेश को एक नए कानून में विवादित प्रावधानों को लागू करके रद्द करने की मांग की गई थी। हमारे विचार में यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार्य विधायी अभ्यास होगा। 18.
धारा 11 की उप-धारा (2) पर केवल एक नज़र डालने से पता चलता है कि प्रत्यर्थी कर्नाटक राज्य, जो इसके खिलाफ उच्च न्यायालय की खंड पीठ के फैसले का एक पक्ष था, ने अपनी विधायी शक्ति का सहारा लेकर निर्णय के बाध्यकारी प्रभाव से बाहर निकलने का प्रयास किया था। किसी भी न्यायालय या

सक्षम प्राधिकारी जो राज्य के खिलाफ अंतिम हो गए थे, उन्हें विवादित अधिनियम बनाकर समाप्त करने की मांग की गई थी।

इसके लाभ के लिए, राज्य इस तरह के निर्णय को हटाने के लिए अपनी विधायी शक्ति का उपयोग नहीं कर सका। एक बार जब यह निर्णय अंतिम हो गया था और कर्नाटक राज्य ने संभवतः इस न्यायालय के समक्ष इसे चुनौती देना उचित नहीं समझा था क्योंकि इसी तरह के अन्य मामलों में इस न्यायालय ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के अन्य फैसलों को बरकरार रखा था। उसी दृष्टिकोण से, यह किसी की समझ को पारित करता है कि कैसे विधायी शक्ति को बाध्यकारी प्रभावों को पूर्ववत करने के लिए सेवा में दबाया जा सकता है

ऐसे मैंडमस। यह भी ध्यान देने योग्य है कि न केवल धारा 11 की उप-धारा (2) निर्णयों के बाध्यकारी प्रभाव को दरकिनार करने और ओवरराइड करने का प्रयास करती है, बल्कि राज्य को ऐसे निर्णयों और आदेशों की समीक्षा करने और नए आदेश पारित करने के लिए सशक्त बनाने का भी प्रयास करती है।

विवादित अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार। वर्तमान मामले में प्रतिवादी राज्य ने विवादित अधिनियम की धारा 11 की उप-धारा (2) को लागू करके स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय के बाध्यकारी निर्णय को रद्द या निरस्त करने की मांग की है और संबंधित कानूनों और संविधान के तहत काम करने वाले विभिन्न प्राधिकरणों को सौंपी गई न्यायिक शक्ति का अतिक्रमण किया है। विधायी शक्ति के इस तरह के प्रयोग को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। 20. इसलिए हम धारा 11 की उप-धारा (2) को असंवैधानिक, अवैध और अमान्य बताते हुए खारिज करते हैं। जहां तक धारा 4 की उप-धारा (2), (3) और (8) के रेखांकित आक्षेपित भागों का संबंध है, भारत की चिकित्सा परिषद v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

वे स्पष्ट रूप से प्रतिवादी के खिलाफ उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा जारी बाध्यकारी निर्देश के साथ संघर्ष करते हैं-राज्य और पक्ष में

याचिकाकर्ताओं से। एक बार उत्तरदाता-राज्य को नुकसान उठाना पड़ा था

मानित पदोन्नति के आधार पर याचिकाकर्ताओं जैसे आबंटियों को परिणामी वित्तीय लाभ देना अनिवार्य है-परिणामी मौद्रिक लाभों के भुगतान के बारे में ऐसा बाध्यकारी निर्देश

इसलिए, धारा 4 की उप-धाराओं (2), (3) और (8) के रेखांकित भागों को संविधान के आदेशों के आलोक में पढ़ना होगा।
न्यायालय जो प्रत्यर्थी के खिलाफ अंतिम हो गए हैं-राज्य और जहां तक ये प्रावधान इन अंतिम आदेशों के साथ असंगत हैं

न्यायिक प्राधिकरणों और सक्षम अधिकारियों के ऐसे निर्देश शामिल हैं

अदालतों, धारा 4 के इन विवादित प्रावधानों को रास्ता देना होगा

और इस तरह की विसंगति की सीमा तक माना जाना चाहिए

निष्क्रिय और अप्रभावी। तदनुसार, उपरोक्त प्रावधानों को यह देखते हुए पढ़ा जाता है कि धारा 4 की उप-धारा (2), (3) और (8) में निहित वैधानिक प्रावधानों में यह प्रावधान किया गया है कि

जिन व्यक्तियों को मानित पदोन्नति दी गई है, वे नहीं होंगे

अपनी वास्तविक पदोन्नति की तारीख से पहले की अवधि के लिए किसी भी बकाया के हकदार, उन मामलों में लागू नहीं होंगे जहां प्रतिवादी के खिलाफ सक्षम अदालतों के विपरीत निर्देश हैं-राज्य

अंतिम हो जाता है। "

न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय। यह बाद के कानून द्वारा उस अंतिम निर्णय को सीधे रद्द नहीं कर सकता है। यदि इसका उद्देश्य किसी अंतिम निर्णय को रद्द करना है, तो विधायिका के ऐसे अधिनियम को असंवैधानिक घोषित किया जाना चाहिए। अदालत ने उन्होंने देखा है:

" 13. यह इस न्यायालय के निर्णयों के एक समूह द्वारा तय किया गया कानून है कि

विधायिका किसी अदालत के फैसले को सीधे रद्द नहीं कर सकती है। द.

विधायी कार्य में "कानून बनाना" शामिल है [देखू:

] 10 एस. सी. आर. का अनुच्छेद 245।

संविधान] और "घोषणा" करने में नहीं कि कानून क्या होगा [देखें कि: संविधान का अनुच्छेद 141]। यदि विधायिका अदालतों के फैसलों को रद्द करने के लिए स्वतंत्र थी, तो प्राप्तकर्ता के बिलों का भूत हमें विधायी निर्णय पारित करने में सक्षम बनाने के लिए फिर से देखेगा।

उन मामलों पर जो अंतर-पक्षीय हैं। दिलचस्प बात यह है कि इंग्लैंड में, एक के खिलाफ विधायी निर्णय पारित करने वाला अंतिम ऐसा विधेयक फेनविक नामक व्यक्ति 1696 में चला गया था। एक सदी बाद, अमेरिकी संविधान ने स्पष्ट रूप से प्राप्तकर्ता के बिलों को गैरकानूनी घोषित कर दिया

[देखू: अनुच्छेद 1 धारा 9]।

14. यही कारण है कि हमारा संविधान एक विधायिका को पूर्वव्यापी रूप से कानून बनाने की अनुमति देता है जो कानून को बदल सकता है जैसा कि निर्णय लेने के समय था। यह इस सीमित परिस्थिति में है कि एक विधायिका अदालत द्वारा दिए गए निर्णय के आधार को बदल सकती है, और यदि कोई अपील या अन्य कार्यवाही लंबित है, तो अदालत को इस तरह से बनाए गए कानून को पूर्वव्यापी रूप से लागू करने में सक्षम बनाती है जो तब पहले के निर्णय के आधार को बदल देगा ताकि यह अब अच्छा न रहे। हालाँकि, यदि ऐसा नहीं है तो न्यायिक शक्ति पर खाई डालने वाला कानून अनिवार्य रूप से होना चाहिए

असंवैधानिक घोषित किया गया "।

27. चेविटी वेंकन्ना यादव बनाम में निर्णय। की स्थिति

तेलंगाना और ओआरएस। (2017) 1 एस. सी. सी. 283, पर प्रत्यर्थियों की ओर से भरोसा किया गया था, जिसमें न्यायालय ने अधिनियम के एक प्रावधान को अदालत द्वारा निरस्त करने के बाद पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ संशोधन के प्रश्न पर विचार किया। यह कब विधायिका द्वारा किसी निर्णय के वैधानिक अधिनिर्णय के बराबर नहीं होता है? इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विधायिका के पास कानून बनाने की शक्ति है जिसमें कानूनों को पूर्वव्यापी रूप से संशोधित करने की शक्ति और इस तरह प्रभावहीनता या अयोग्यता के कारणों को दूर करना शामिल है। इसके अलावा, जब इस तरह का सुधार किया जाता है, तो इसके पीछे का उद्देश्य अदालत के फैसले को रद्द करना या न्यायिक क्षेत्र का अतिक्रमण करना नहीं है, लेकिन

बस कानून की नींव और अर्थ को बदलने और उस आधार को हटाने के लिए जिस पर निर्णय आधारित है, पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ एक नया कानून लागू करें। उच्च न्यायालय के आदेश, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि संशोधित प्रावधान न्यायिक शक्ति को हड़प नहीं लेते हैं, को बरकरार रखा गया और

अदालत ने यह भी कहा कि संविधान के अनुच्छेद 14 का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। न्यायालय ने टिप्पणी की:

" 25. हम पहले बिंदु पर चर्चा करेंगे। पुनर्गठन अधिनियम 02.06.2014 पर लागू हुआ। प्रस्तुतिकरण, उक्त तिथि से पहले, भारत की आई. सी. ए. एल. परिषद v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

विधायिका जो एक इकाई के रूप में अस्तित्व में नहीं थी, वह पूर्व अवधि को शामिल करने वाले किसी पहलू से संबंधित कानून नहीं बना सकती थी। उपरोक्त निवेदन हमें लंबे समय तक नहीं रोकेगा। एम/एस में। रतन लाल एंड कंपनी और अन्र। आदि वी। मूल्यांकन प्राधिकरण, पटियाला और ए. एन. आर. ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 1742 न्यायालय क्षमता पर विचार कर रहा था।

हरियाणा राज्य के पुनर्गठन से पहले एक संशोधन के माध्यम से हरियाणा राज्य द्वारा अधिनियमित एक कानून से संबंधित। इस संदर्भ में न्यायालय ने कहा:

" 12. ..... यह तर्क दिया जाता है कि राज्य का पुनर्गठन 1 नवंबर, 1966 को हुआ था और इसके कुछ हिस्सों में संशोधन मूल अधिनियम को इस तारीख से पहले की तारीख से संशोधित करने का प्रयास करता है। दूसरे शब्दों में, किसी एक राज्य का विधानमंडल समग्र राज्य द्वारा पारित कानून में संशोधन करना चाहता है। यह तर्क पुनर्गठन के बाद मूल अधिनियम की स्थिति को पूरी तरह से गलत समझता है। वह अधिनियम अब प्रत्येक क्षेत्र में एक स्वतंत्र अधिनियम के रूप में लागू होता है और उस क्षेत्र में विधायिका की विधायी क्षमता के अधीन है। अधिनियम

उस राज्य के क्षेत्र के संबंध में नए राज्यों में संशोधन किया गया है और यह अकल्पनीय है कि यह क्षमता के भीतर नहीं हो सकता है। यदि तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है तो यह अधिनियम तब तक अपरिवर्तनीय रहेगा जब तक कि समग्र राज्य नहीं आता।

एक बार फिर अस्तित्व में। राज्यों की योजना

पुनर्गठन अधिनियम कानूनों को नए क्षेत्रों पर तब तक लागू करते हैं जब तक कि उपयुक्त द्वारा प्रतिस्थापित, संशोधित या परिवर्तित नहीं किया जाता है।

नए राज्यों में विधायिका। विधायिका ने यही किया है और इस तरह के संशोधन के खिलाफ कुछ नहीं कहा जा सकता है।

उपरोक्त परिच्छेद से यह स्पष्ट होता है कि विधानमंडल के अस्तित्व में आने के बाद, यह संवैधानिक प्रावधानों के भीतर पूर्वव्यापी या संभावित रूप से किसी भी कानून को लागू करने की क्षमता रखता है।

मापदंड।

26. दूसरा मुद्दा जो विचार के लिए आता है वह यह है कि क्या पहले के फैसले का आधार वास्तव में हटा दिया गया है। तथ्यात्मक स्कोर बताने से पहले, यह बताना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने उक्त सिद्धांत को कैसे देखा है। श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और अन्र में। वी. ब्रोच बरो नगरपालिका और ओआरएस। (1969) 2 एस. सी. सी. 283 [2018] 10 एस. सी. आर.

संविधान पीठ ने उस कानून पर विचार करते हुए, जिसका उद्देश्य कानून द्वारा अवैध घोषित कर को मान्य करना था, राय दी

कि जब कोई विधानमंडल किसी अदालत द्वारा किसी अप्रभावी या अमान्य कानून के तहत अवैध रूप से एकत्र किए गए कर को मान्य करने के लिए निर्धारित करता है, तो सत्यापन को प्रभावी ढंग से होने से पहले प्रभावहीनता या अयोग्यता के कारण को हटा दिया जाना चाहिए। बेशक, सबसे महत्वपूर्ण शर्त यह है कि विधानमंडल के पास कर लगाने की शक्ति होनी चाहिए, क्योंकि यदि ऐसा नहीं होता है, तो कार्रवाई कभी भी अप्रभावी और अवैध बनी रहेगी। विधायी क्षमता प्रदान की गई,

केवल यह घोषणा करना पर्याप्त नहीं है कि न्यायालय का निर्णय बाध्यकारी नहीं होगा, क्योंकि यह न्यायिक शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्णय को उलटने के समान है जो विधानमंडल के पास नहीं है या प्रयोग नहीं करता है। अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि

जिन शर्तों पर यह आधारित है, उनमें मौलिक रूप से इतना बदलाव किया गया है कि बदली हुई परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था। इसके बाद, न्यायालय ने कहा कि इस तरह से अवैध घोषित कर का सत्यापन केवल तभी किया जा सकता है जब अवैधता या अयोग्यता के आधार को हटाया जा सके और वास्तव में हटा दिया जाए और इस प्रकार कर को कानूनी बना दिया जाए। विधायिका इसे कई तरह से करती है।

यह जिन तरीकों को अपना सकता है, उनमें से एक है उस कानून का अपना अर्थ और व्याख्या देना जिसके तहत कर एकत्र किया गया था और विधायी आदेश द्वारा अदालतों पर बाध्यकारी नया अर्थ बनाता है। इस तरह का कानून लाए जाने पर, यह पहले के निर्णय के प्रभाव को बेअसर कर देता है जिसके परिणामस्वरूप यह अप्रभावी हो जाता है। द.

किसी विधि की वैधता का परीक्षण इस बात पर निर्भर करता है कि क्या विधानमंडल के पास वह क्षमता है जिसका वह दावा करता है - विषय-वस्तु और क्या सत्यापन करने में यह उस दोष को दूर करता है जिसे अदालतों ने मौजूदा कानून में पाया था और कर के वैध अधिरोपण के लिए सत्यापन कानून में पर्याप्त प्रावधान करता है।

27. भुवनेश्वर सिंह और अन्र में। वी. भारत संघ और ओआरएस। (1994) 6 एस. सी. सी. 77 कोकिंग कोयला खान (आपातकालीन प्रावधान) अधिनियम, 1971 की धारा 3 को ध्यान में रखते हुए, जिसे वर्ष 1971 में लागू किया गया था, केंद्रीय सरकार द्वारा नियुक्त अभिरक्षक

सरकार ने कोकिंग कोयला खदानों का प्रबंधन अपने हाथ में ले लिया और उक्त खदानें इस अवधि के दौरान संरक्षक के माध्यम से केंद्र सरकार के प्रबंधन के अधीन रहीं

17.10.1971 30.04.1972 तक। कोकिंग कोयला खदान (राष्ट्रीयकरण)

भारत की जिला परिषद v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

अधिनियम, 1972 डब्ल्यू. ई. एफ. 1.5.1972 लागू हुआ और कोकिंग कोयला खदानों के संबंध में मालिकों का अधिकार, स्वामित्व और हित कायम रहा।

विधि (संशोधन) अधिनियम, 1986 लागू हुआ। संशोधन अधिनियम की धारा 4 द्वारा, उप-धारा (2) कोकिंग कोयला खान (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 की धारा 10 में पेश की गई थी। उक्त प्रावधान में घोषित किया गया है कि किसी भी कोकिंग कोयला खदान या कोकिंग कोयला खदान के समूह के खिलाफ पहली अनुसूची के पांचवें कॉलम में निर्दिष्ट राशि उक्त के दूसरे कॉलम में निर्दिष्ट की गई है। केंद्र सरकार द्वारा उप-धारा (1) के तहत अपने मालिक को अनुसूची दिए जाने की आवश्यकता होती है, जिसे शामिल माना जाएगा, और हमेशा शामिल माना जाएगा, वह राशि जो नियत दिन से तुरंत पहले धारा 3 के खंड (जे) में निर्दिष्ट स्टॉक या अन्य संपत्तियों में कोयले के संबंध में ऐसे मालिक को भुगतान की जानी चाहिए और ऐसे कोयले या अन्य संपत्तियों के संबंध में मालिक को कोई अन्य राशि का भुगतान नहीं किया जाएगा। धारा 19 मान्य करने वाला प्रावधान था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

28. रिट याचिका मुख्य रूप से इस आधार पर उक्त अध्यादेश की वैधता पर सवाल उठाते हुए दायर की गई थी कि यह सेंट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड बनाम के मामले में दिए गए फैसले को रद्द करने के लिए है। भुवनेश्वर सिंह और अन्य। (1984) 4 एससीसी 429। न्यायालय ने प्रावधानों का उल्लेख किया और राय दी कि:

" 13. ..... यदि धारा 10 में कोयला खान राष्ट्रीयकरण कानून (संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा शुरू की गई उप-धारा (2) स्थापना के समय से ही मौजूद थी, तो उच्च न्यायालय या इस न्यायालय के लिए उस कीमत को ध्यान में रखने के लिए निर्देश जारी करने का कोई अवसर नहीं था जो नियत दिन से पहले की तारीख को पड़े कोक के स्टॉक के लिए देय थी। पूर्वव्यापी प्रभाव से उपरोक्त अधिनियम की धारा 10 में उप-धारा (2) को लागू करने के अधिकार पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है। एक बार

संशोधन पूर्वव्यापी रूप से पेश किया गया है, अदालतों को इस आधार पर कार्य करना होगा कि ऐसा प्रावधान शुरू से ही था। इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला को देखते हुए डीमिंग प्रावधान की भूमिका पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है। अतः धारा 19 के साथ धारा 10 की उप-धारा (2) को पढ़कर यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि उत्तरदाताओं को उस अवधि के दौरान लेखांकन के उद्देश्य से नियत दिन से पहले की तारीख को पड़े कोक के भंडार को ध्यान में रखने की आवश्यकता नहीं है जब

विचाराधीन खदान केंद्र सरकार के प्रबंधन के अधीन थी, क्योंकि यह माना जाएगा कि याचिकाकर्ता को दिए गए मुआवजे में नियत दिन से पहले की तारीख को स्टॉक में पड़े ऐसे कोयले की कीमत शामिल थी। कोयले के ऐसे भंडार के लिए न तो कोई मुआवजा दिया जाना है और न ही उप-प्रावधान के उद्देश्य के लिए इसकी कीमत को ध्यान में रखा जाना है।

कोकिंग कोयला खानों की धारा 22 की धारा (1) (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 "।

इस दृष्टिकोण के कारण, अदालत ने रिट याचिका को खारिज कर दिया।

29. राज्य में एच. पी. बनाम. नारायण सिंह (2009) 13 एस. सी. सी. 165 ने क़ानून के सत्यापन पर विचार करते हुए फैसला सुनाया कि:

" 26. इसलिए यह स्पष्ट है कि एक सक्षम विधायी प्रावधान है जो पूर्वव्यापी रूप से इसके आधार को हटा देता है।

एक निर्णय की नींव, उक्त अभ्यास एक वैध विधायी अभ्यास है बशर्ते यह किसी अन्य संवैधानिक का उल्लंघन न करे

सीमा "। आईसीएएल काउंसिल ऑफ इंडिया v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

उक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, दोनों न्यायाधीशों की पीठ ने पुनः प्रस्तुत किया टी. एन. बनाम राज्य में संविधान पीठ के निर्णय से। अरूरन शुगर लिमिटेड (1997) 1 एस. सी. सी. 326 जो निम्नलिखित प्रभाव से है:

" 28. ..... '16 . ..... यह विधायिका के लिए खुला है कि वह अदालत द्वारा बताए गए दोष को दूर करे या अधिनियम की परिभाषा या किसी अन्य प्रावधान को पूर्वव्यापी रूप से संशोधित करे। इस प्रक्रिया में यह नहीं कहा जा सकता है कि न्यायपालिका की शक्ति पर विधायिका द्वारा अतिक्रमण किया गया है। अदालत का निर्देश

हमेशा बाध्य होना चाहिए जब तक कि जिन शर्तों पर यह आधारित है, उन्हें इतना मौलिक रूप से परिवर्तित नहीं किया जाता है कि परिवर्तित परिस्थितियों में ऐसे निर्णय नहीं दिए जा सकते थे। इसमें निष्कासन शामिल होगा। विचाराधीन निर्णय में बताए गए कानून में दोष का,

साथ ही प्रावधानों में परिवर्तन या प्रतिस्थापन

ऐसा अधिनियम जिसके आधार पर ऐसा निर्णय पूर्वव्यापी हो

प्रभाव "।

30. उपरोक्त अधिकारियों से, यह तय किया जाता है कि विधायी और न्यायिक कार्यों के बीच एक सीमांकन है

शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर। विधायिका के पास कानूनों को लागू करने की शक्ति है जिसमें पूर्वव्यापी रूप से कानूनों में संशोधन करने की शक्ति शामिल है और इस तरह प्रभावहीनता या अयोग्यता के कारणों को हटा दिया जाता है। जब कोई कानून पूर्वव्यापी प्रभाव से अधिनियमित किया जाता है, तो इसे न्यायिक शक्ति पर अतिक्रमण नहीं माना जाता है जब विधायिका किसी न्यायिक उक्ति को सीधे खारिज या उलट नहीं करती है। विधायिका, एक अधिनियम के माध्यम से, अदालत के किसी निर्णय को गलत या अमान्य घोषित नहीं कर सकती है, लेकिन क़ानून या प्रावधान में संशोधन कर सकती है ताकि इसे अतीत में लागू किया जा सके। विधायिका के पास एक संशोधन के माध्यम से, कानून में एक दोष को सुधारने की शक्ति है

अधिनियम में और यहां तक कि अदालत के फैसले में भी उजागर किया गया। कानून के अनुरूप लाने की यह पूर्ण शक्ति विधायी इरादे और अदालत द्वारा बताए गए दोष को ठीक करने का एक उपचारात्मक और तटस्थ प्रभाव हो सकता है। जब इस तरह का सुधार किया जाता है, तो इसके पीछे का उद्देश्य निर्णय को रद्द करना नहीं होता है

न्यायालय का अधिकार या न्यायिक क्षेत्र का अतिक्रमण, लेकिन केवल कानून की नींव और अर्थ को बदलने और उस आधार को हटाने के लिए पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ एक नया कानून अधिनियमित करें जिस पर निर्णय आधारित है। यह वैधानिक अधिनिर्णय [2018] 10 एस. सी. आर. के बराबर नहीं है।

विधायिका द्वारा। इस तरह, न्यायालय का पूर्व निर्णय अस्तित्वहीन हो जाता है और नए विधान की व्याख्या के लिए अप्रवर्तनीय हो जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नए कानून को उसके गुण-दोष और इस सवाल के आधार पर परखा और चुनौती दी जा सकती है कि क्या विधायिका के पास विचाराधीन विषय पर कानून बनाने की क्षमता है, लेकिन अति-पहुंच या रंगीन आधार पर नहीं।

कानून "।

उपरोक्त प्रस्ताव के साथ कोई विवाद नहीं है कि विधायिका वह कानूनों को पूर्वव्यापी रूप से संशोधित करने की शक्ति देती है और इस तरह प्रभावशीलता या अयोग्यता के उपयोग को हटा देती है जिस पर निर्णय आधारित है, यह न्यायिक शक्ति पर अतिक्रमण नहीं होगा जब -

ए. टी. यू. आर. किसी न्यायिक उक्ति को सीधे तौर पर खारिज या उलट नहीं करता है।

28. उत्तरदाताओं ने रिलायंस को गोवा पर भी रखा है।

डेशन & ए. एन. आर. वी. गोवा राज्य और अन्र। (2016) 6 एससीसी 602 जिसमें

और्ट ने इस मामले पर इस प्रकार चर्चा की है:

या तो घोषणात्मक या नागरिकों को अधिकार प्रदान नहीं किया जा सकता है उसके लिए एक बाद के विधायी अधिनियम द्वारा शून्य पर निर्धारित राशि होगी

न्यायिक शक्तियों का अतिक्रमण करना। हालांकि,

विधायिका न्यायालय के निर्णय के आधार को हटाकर पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ, यदि उचित समझा जाए, तो एक संशोधन या मान्यकारी अधिनियम पारित करने में सक्षम होगी। ऐसी स्थिति में भी, अदालतें उपार्जित अधिकारों के पूर्वव्यापी अभाव को मंजूरी नहीं दे सकती हैं।

बाद के विधान के माध्यम से एक निर्णय से [मदन]

मोहन पाठक और अन्र। वी. भारत संघ और ओआरएस। (1978) 2 एससीसी 50. हालाँकि, जहाँ न्यायालय का निर्णय विशुद्ध रूप से घोषणात्मक है, वहाँ अदालतें न्यायालय के फैसले के आधार को पूर्वव्यापी रूप से भी हटाने के लिए विधायी शक्ति के समर्थन में झुकेंगी, जिससे

पूर्व की यथास्थिति की बहाली का मार्ग। हालांकि परिणाम न्यायिक घोषणा पर काबू पाने के लिए एक अभ्यास प्रतीत हो सकता है-यह केवल पहली बार में ही शर्मनाक है; एक करीबी जांच होगी।

इस तरह के अभ्यास को वैधता प्रदान करें क्योंकि यह विधायी शक्ति का एक सामान्य सहायक है। पूरा अभ्यास दो निकायों यानी न्यायपालिका और विधायिका द्वारा प्रयोग किए जाने वाले अधिकार क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों को देखने का है।

द बैलेंसिंग एक्ट, मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

संवैधानिक योजना के लिए यह जितना नाजुक है, वह अच्छी तरह से परिभाषित मूल्यों द्वारा निर्देशित है, जिसमें संक्षिप्त अभिव्यक्ति पाई गई है

भक्तवार न्यास और अन्य में इस न्यायालय के विचार। (ऊपर)।

26. यदि उपरोक्त सिद्धांतों को वर्तमान मामले में लागू किया जाना है तो निम्नलिखित बात यह है कि धारा 41 (6) से (9) प्रिंसिपल में पेश की गई है। गोवा राज्य संशोधन अधिनियम मूल अधिनियम की धारा 41 के तहत पक्षों द्वारा निष्पादित समझौते के खंड 4 (viii) को अप्रभावी बनाता है। खंड 4 (viii) को हटाने के साथ अधिग्रहित भूमि पर निर्माण पर प्रतिबंध हटा दिया जाता है। यह उपरोक्त खंड 4 (viii) और इसका कानूनी प्रभाव, धारा 42 को देखते हुए, 20 जनवरी 2009 के न्यायालय के फैसले का आधार था, जिसमें अधिग्रहित भूमि पर तीसरे प्रतिवादी द्वारा उठाए गए निर्माण को अवैध और मूल अधिनियम के विपरीत माना गया था। एक बार खंड 4 (viii) को हटा दिए जाने के बाद पहले के फैसले का आधार समाप्त हो जाता है। वास्तव में, यह कहना संभव हो सकता है कि यदि खंड 4 (viii) बिल्कुल भी मौजूद नहीं होता, तो 20 जनवरी 2009 का न्यायालय का निर्णय आने वाला नहीं होता। इसलिए यह अच्छा था

पूर्वव्यापी प्रभाव से संशोधन अधिनियम लाने के लिए विधानमंडल के अधिकार क्षेत्र के भीतर, विधायी क्षेत्र भी समवर्ती सूची में है, अर्थात्, सातवीं अनुसूची की सूची III (संपत्ति का अधिग्रहण और अधिग्रहण) की प्रविष्टि संख्या 42 संविधान "।

न्यायालय ने इस बात पर फिर से जोर दिया है कि एक न्यायिक घोषणा, या तो

नागरिकों को घोषणात्मक या अधिकार प्रदान करने को बाद के विधायी अधिनियम द्वारा शून्य नहीं किया जा सकता है। तथापि, विधायिका एक संशोधन या मान्यकारी अधिनियम पारित करने के लिए सक्षम होगी, यदि उचित समझा जाता है, तो पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ न्यायालय के निर्णय के आधार को हटा कर कानून में संशोधन करना। इस प्रकार, एक बार खंड 4 (viii) के प्रावधानों को हटा दिए जाने के बाद, पहले के निर्णय का आधार समाप्त हो गया।

29. गोवा ग्लास फाइबर लिमिटेड बनाम। गोवा राज्य और अन्र। (2010) 6 एस. सी. सी. 499, एक सवाल उठा कि क्या गोवा (आगे भुगतान का निषेध और छूट लाभों की वसूली) अधिनियम, 2002 के तहत, धारा 2,3,5 और 6 असंवैधानिक थीं। यह तर्क दिया गया था कि विवादित अधिनियम न्यायालय के फैसले को रद्द कर देता है। न्यायालय ने कहा है:

" 15. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि एक क़ानून को सीमित आधारों पर अमान्य या असंवैधानिक ठहराया जा सकता है।, [2018] 10 एस. सी. आर. के आधार पर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

17. अधिनियम की भाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह अधिनियम मनोहर पर्रिकर के मामले में उच्च न्यायालय के फैसले के परिणाम से प्रभावित नहीं है। अधिनियम द्वारा, विधानमंडल अधिसूचनाओं के तहत आगे के भुगतान पर प्रतिबंध लगा दिया है, लाभार्थियों से छूट लाभ की वसूली का प्रावधान है

और अधिसूचनाओं के तहत राज्य की देयता को समाप्त कर देता है

ऊपर उल्लेख किया गया। विधानमंडल द्वारा की गई यह कवायद मनोहर पर्रिकर की जनहित याचिका के परिणामों से स्वतंत्र है और इसे उक्त फैसले से अप्रभावित कहा जा सकता है। यह राज्य की विधायी शक्ति के भीतर था कि वह उन निर्विवाद और परेशान करने वाले तथ्यों का जवाब दे, जिनका राज्य के वित्त पर भारी वित्तीय प्रभाव पड़ा था, ताकि सुधार के उद्देश्य से कानून बनाया जा सके।

असंतोषजनक स्थिति जो विधानमंडल को ज्ञात थी।

18. कि अधिनियम का उद्देश्य इस न्यायालय या उच्च न्यायालय के निर्णयों को पूर्ववत या उलटना नहीं है। समग्र रूप से अधिनियम को पढ़ने पर, ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि विधानमंडल किसी भी निर्णय या उसमें निहित किसी भी निर्देश को पूर्ववत करना चाहता है।

जैसा कि पहले देखा गया है कि अधिनियम [धारा 2 के तहत] एक निषेध लागू करता है, [धारा 3 के तहत] वसूली की आवश्यकता होती है और राज्य की सभी देनदारियों को "समाप्त" कर देता है जो दिनांकित 15.05.1996 और 01.08.1996 अधिसूचनाओं से उपार्जित या उत्पन्न होती हैं। इसलिए, इस अधिनियम की संवैधानिकता के मामले में कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता है।

कि यह किसी भी निर्णय को पूर्ववत या उलटने का प्रयास करता है। विधायिका ने अपनी क्षमता में अधिनियम को उसमें बताए गए उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अधिनियमित किया है और किसी भी अदालत के किसी भी फैसले को विफल करने के लिए नहीं।

इस न्यायालय सहित। यह ध्यान देने योग्य है कि भारत की राज्य विधानमंडल चिकित्सा परिषद v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

पी. आई. एल. में उच्च न्यायालय के फैसले से पहले भी अधिनियम को उसके वर्तमान रूप में अधिनियमित करने के लिए सक्षम था और यह तथ्य कि यह है

पी. आई. एल. में निर्णय के बाद आना इसे इस आधार पर असंवैधानिक नहीं बनाता है कि यह इस न्यायालय के फैसले को रद्द करने का प्रयास करता है पूर्ववर्ती कार्यवाही "।

राज्य का दायित्व जो उपार्जित हुआ या उत्पन्न हुआ

उसमें निर्दिष्ट अधिसूचनाओं को बुझाने की मांग की गई थी। यह था। अभिनिर्धारित किया कि यह निर्णय को पूर्ववत करने के लिए नहीं था। विधायिका को आधार को हटाने के लिए सक्षम माना गया था।

30. टीका राम और ओआरएस में। वी. उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य। (2009) 10 एस. सी. सी. 689, इस न्यायालय ने भूमि अधिग्रहण के प्रावधानों पर विचार किया

(उत्तर प्रदेश संशोधन और वैधीकरण अधिनियम, 1991, विशेष रूप से इसकी धारा 2 और 3 में भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 17 (4) में परन्तुक जोड़ते हुए इसे संवैधानिक ठहराया। यह तर्क कि उत्तर प्रदेश संशोधन अधिनियम ने केवल कश्मीर सिंह के मामले ए. आई. आर. 1987 के फैसलों को रद्द करने की कोशिश की। 113 या यू. पी. राज्य बनाम राधे श्याम निगम (1989) 1 एस. सी. सी. 591 और आधार या नींव को नहीं हटाया इसलिए, अनुच्छेद 245 और 246 को खारिज कर दिया गया था। भूमि की संवैधानिक वैधता के बारे में सवाल उठा

धारा 17 (4) 4.12.1984 पर जारी की गई थी जिसे 8.12.1984 पर राजपत्र में प्रकाशित किया गया था। धारा 6 के तहत घोषणा 4.12.1984 पर की गई थी और 8.12.1984 पर राजपत्र में प्रकाशित की गई थी। यह पाया गया कि धारा 4 और 6 के तहत एक साथ अधिसूचनाएं नहीं की जा सकती थीं और इसलिए अधिग्रहण खराब थे जैसा कि कश्मीर सिंह बनाम में माना गया था। उत्तर प्रदेश राज्य आकाशवाणी 1987 सभी। 113 जिसे इस न्यायालय ने बरकरार रखा था। इसके बाद अध्यादेश जारी किया गया। द स्टेटमेंट ऑफ ऑब्जेक्ट्स एंड रीजन्स ने कश्मीर सिंह के मामले में फैसले का उल्लेख किया। धारा के तहत अधिसूचना के संबंध में कार्यवाही को मान्य करने के लिए अधिनियम में संशोधन करने का निर्णय लिया गया 4 इसे 24.9.1984 पर या उसके बाद लेकिन 11.1.1989 से पहले प्रकाशित किया गया था। निम्नलिखित प्रावधान जोड़ा गया था:

“ 55. धारा 17 का संशोधन उसकी उप-धारा (4) के लिए एक परंतुक के माध्यम से कानूनी प्रावधान पर लाया गया था जो निम्नानुसार था:

" बशर्ते कि जहां धारा 4 (1) के तहत किसी भी भूमि अधिसूचना के मामले में आधिकारिक राजपत्र में 24.09.1984 को या उसके बाद लेकिन 11.1.1989 और उपयुक्त [2018] 10 एस. सी. आर. से पहले प्रकाशित किया गया हो।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

सरकार ने इस उप-धारा के निर्देश के तहत कहा है कि धारा 5 ए का प्रावधान लागू नहीं किया गया था, भूमि के संबंध में धारा 6 के तहत एक घोषणा या तो राज्य के आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन के बाद एक समय में की जा सकती है।

धारा 4 उप-धारा (1) के तहत अधिसूचना।

अदालत ने टीका राम (ऊपर) में कहा कि विधायिका ने फैसले को रद्द कर दिया था। हालांकि, यह उपयुक्त रूप से करने की शक्ति रखता है घ न्यायालय द्वारा इंगित दोष को दूर करने के लिए कानून। यह देखा गया:

" 57. इस तर्क का जवाब मेरठ में पूरी तरह से दिया गया है।

अधिनियम, 1991 [1991 का उत्तर प्रदेश अधिनियम सं. 5] और जी. डी. ए. बनाम के रूप में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर भरोसा करना। जन कल्याण समिति, श्योपुरी ने 1996 (2) एस. सी. सी. 365 में रिपोर्ट दी, न्यायालय ने पैराग्राफ 10 में यह विचार लिया कि जब इस न्यायालय ने किसी विशेष क़ानून को अमान्य घोषित कर दिया था, तो विधानमंडल के पास फैसले को रद्द करने की कोई शक्ति नहीं थी। हालाँकि, इसके पास उचित का उपयोग करके कानून में उपयुक्त संशोधन करने की शक्ति है। वाक्यांश विज्ञान न्यायालय द्वारा बताए गए दोषों को दूर करता है और न्यायालय द्वारा घोषित कानून के साथ असंगत कानून में संशोधन करता है ताकि जो दोष बताए गए थे वे कानून के प्रवर्तन के लिए कानून पर कभी न हों। किसी कानून में संशोधन करने की शक्ति का ऐसा प्रयोग न्यायिक शक्ति पर आक्रमण नहीं है।

अमान्य घोषित किया गया। 69. रिलायंस को बख्तावर ट्रस्ट बनाम में भी फैसले पर रखा गया था। एम. डी. नारायण और अन्य। 2003 (5) एस. सी. सी. 298 में रिपोर्ट किया गया। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने पैराग्राफ 14 से 16 पर भरोसा किया। हमारी राय में, अनुच्छेद 14 पूरी तरह से अपीलार्थियों के खिलाफ था

जिसमें राज्य विधानमंडल की पूर्वव्यापी बनाने की शक्ति है।

विधान को मान्यता दी जाती है और इस तरह पूर्व कार्यकारी और विधायी कार्यों को पूर्वव्यापी रूप से मान्य किया जाता है। बेशक, वैसा ही केवल उन दोषों को ठीक करने के बाद किया जाना चाहिए जिनके कारण अमान्य हो गया। हम पैराग्राफ 14,15 और 16 में दिए गए प्रस्तावों से सम्मानपूर्वक सहमत हैं। श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड बनाम

ब्रोच मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया बनाम केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

नगर पालिका ने 1969 (2) एस. सी. सी. 283 में सूचित किया, जो है निर्णय के अनुच्छेद 16 में संदर्भित, यह कहा गया है कि:

" विधानमंडल किसी एक विधि या उन सभी का पालन कर सकता है और जब वह ऐसा करता है, तो वह न्यायालय के पहले के निर्णय के प्रभाव को बेअसर कर सकता है जो न्यायालय के परिवर्तन के बाद अप्रभावी हो जाता है। कानून "।

इसमें आगे कहा गया है कि मान्यता देने वाले कानून की वैधता, इसलिए, यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या विधानमंडल के पास वह क्षमता है जिसका वह विषय वस्तु पर दावा करता है और क्या

सत्यापन करने में यह उस दोष को दूर करता है जिसे अदालतें मौजूदा कानून में पाया गया था। संशोधन अधिनियम स्पष्ट रूप से पारित हो गया है

इन परीक्षणों। इस विषय पर सभी प्रासंगिक मामले हैं

इस निर्णय में विचार किया गया।

न्यायालय ने कहा है कि राज्य विधानमंडल के पास पूर्वव्यापी कानून बनाने की शक्ति है, जिससे पूर्व कार्यपालिका को मान्यता मिलती है और विधायी कार्य पूर्वव्यापी रूप से, ऐसी शक्ति को मान्यता दी जाती है। बेशक, वैसा ही केवल उन दोषों को ठीक करने के बाद किया जाना चाहिए जिनके कारण अमान्य हो गया।

31. विभिन्न निर्णयों में कानून के उपरोक्त सिद्धांतों की व्याख्या के आलोक में जब हम परिदृश्य में वापस आते हैं

तत्काल मामले में, यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय का निर्णय था

केरल ने 2016-17 में एमबीबीएस/बीडीएस पाठ्यक्रमों में प्रवेश के संबंध में 26.8.2016 पर निर्देश दिया कि सभी कॉलेज इस बात पर सहमत हों कि प्रवेश के लिए आवेदन केवल "ऑनलाइन" के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं और यह कि उक्त प्रक्रिया योग्यता के साथ-साथ छात्रों की पहचान के संबंध में पारदर्शिता प्रदान करती है।

आवेदक। ऐसे आवेदनों को प्रवेश पर्यवेक्षी समिति की जांच के लिए भी अपलोड किया जाएगा।

32. उक्त अंतरिम आदेश के खिलाफ, जो अंतिम प्रकृति का था, भारत संघ ने एक एसएलपी दायर की थी। इस न्यायालय ने केवल उस हिस्से को अलग कर दिया

शर्त संख्या 1 जिसमें संबंधित कॉलेजों को योग्यता में गए बिना परामर्श आयोजित करने और छात्रों को प्रवेश देने की अनुमति दी गई थी। इस न्यायालय ने सीए No.9862/2016 में दिनांकित

28.9.2016 के निर्णय में केरल उच्च न्यायालय के उपरोक्त आदेश का उल्लेख किया है। सी. ए. No.3874/2018, (2018 (6) स्केल 174)-अनीता नौकरी और अन्य। वी. केरल राज्य और अन्य। 20.4.2018 पर निर्णय लेते हुए, इस न्यायालय ने कहा:

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" 14. हम पहले ही ऊपर देख चुके हैं कि केरल उच्च न्यायालय ने 26.08.2016 पर अंतरिम आदेश पारित किया है जिसके तहत उच्च न्यायालय ने एमबीबीएस/बीडीएस पाठ्यक्रमों 2016-2017 में प्रवेश के संबंध में कुछ निर्देश जारी किए हैं। निर्णय का पैराग्राफ 9 जो इस संदर्भ में प्रासंगिक है, इस प्रकार है:

" 9. तदनुसार, विवादित आदेशों के संचालन और कार्यान्वयन पर अंतरिम रोक होगी, जी. ओ. (आरटी) संख्या 2314/2016/एच एंड एफडब्ल्यूडी दिनांक 20.08.2016 और जी. ओ. (आरटी) संख्या 2336/2016/एच एंड एफडब्ल्यूडी दिनांक 23.08.2016, निम्नलिखित शर्तों के अधीन:

(i) एम. बी. बी. एस./बी. डी. एस. पाठ्यक्रमों में प्रवेश केवल एन. ई. ई. टी. की श्रेणी सूची में उम्मीदवारों की श्रेणी के आधार पर होगा। 2016 , उम्मीदवारों के बीच योग्यता के आधार पर,

जिन्होंने संबंधित महाविद्यालयों में आवेदन किया है।

आवेदकों की पहचान। इसलिए ऐसे आवेदनों को प्रवेश पर्यवेक्षी की जांच के लिए अपलोड किया जाएगा। समिति भी अंतिम तिथि की समाप्ति पर तुरंत

आवेदन जमा करना।

(iii) चूंकि प्रवेश पर्यवेक्षी समिति के वकील ने शिकायत की है कि कुछ कॉलेजों ने अपने विवरण के लिए प्रवेश पर्यवेक्षी समिति की मंजूरी प्राप्त नहीं की है, इसलिए प्रवेश प्रक्रिया केवल एक विवरण के आधार पर आगे बढ़ाई जाएगी, जिसके लिए प्रवेश पर्यवेक्षी समिति की मंजूरी प्राप्त की गई है।

(iv) प्रवेश पर्यवेक्षी समिति को निर्देश दिया जाता है कि वह उन्हें प्रस्तुत किए गए विवरण-पत्र को या तो अनुमोदित करे या अस्वीकार करे।

अनुमोदन, इस तरह के प्रस्तुत करने के तीन दिनों के भीतर।

15. यह प्रासंगिक है कि केरल उच्च न्यायालय के दिनांक 26.8.2016 के अंतरिम आदेश के खिलाफ, भारत संघ ने एक एसएलपी दायर की है जिसे इस न्यायालय द्वारा 28.9.2016 पर C.A.No.9862 में निपटाया गया था।

2016. इस न्यायालय ने शर्त संख्या 1 के केवल उस हिस्से को अलग कर दिया जिसमें संबंधित कॉलेजों को योग्यता में गए बिना परामर्श आयोजित करने और छात्रों को प्रवेश देने की अनुमति है।

यह न्यायालय, भारत की चिकित्सा परिषद v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

हालाँकि, विशेष रूप से कहा गया कि यह न्यायालय उन छात्रों के प्रवेश में हस्तक्षेप नहीं कर रहा है जो संबंधित कॉलेजों द्वारा किए गए हैं क्योंकि वे व्यवस्था तक पहुँचने के बाद किए गए थे राज्य सरकार के साथ। इस न्यायालय के अंतिम दो अनुच्छेद

28.9.2016 दिनांकित आदेश इस प्रकार हैं:

उत्तरदाताओं, हम शर्त संख्या 1 के उस हिस्से को अलग करते हैं जिसमें संबंधित कॉलेजों को योग्यता में गए बिना परामर्श आयोजित करने और छात्रों को प्रवेश देने की अनुमति है। इस मुद्दे को अंततः समाप्त कर दिया जाएगा और उच्च न्यायालय द्वारा उन रिट याचिकाओं में निर्णय लिया जाएगा जो उसके समक्ष लंबित हैं। हालांकि, हम संबंधित कॉलेजों द्वारा किए गए छात्रों के प्रवेश में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं

क्योंकि ये राज्य सरकार के साथ समझौता करने के बाद किए जाते हैं। इस संबंध में जिन शर्तों का उल्लेख किया गया है

आक्षेपित आदेश लागू होता रहेगा।

अपील का निपटारा उपरोक्त शर्तों में किया जाता है।

इस न्यायालय के साथ-साथ केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से यह स्पष्ट है कि ऑनलाइन आवेदन प्राप्त करना अनिवार्य था

और यह निर्णय में निष्पक्ष प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए निर्धारित किया गया था

प्रवेश, पारदर्शिता के साथ-साथ आवेदकों की पहचान। शर्त केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित न्यायिक समीक्षा की शक्ति पर निर्णय का परिणाम था और इस न्यायालय द्वारा भी इसकी पुष्टि की गई थी। इस प्रकार, उसी निर्णय को विवादित अध्यादेश द्वारा इसके विपरीत प्रावधान करके रद्द करने का प्रयास किया जाता है। अध्यादेश के अनुसार प्रवेश को आवेदन जमा करने के तरीके के अनुसार नियमित किया जाना है। यह किसी भी मौजूदा कानून में दोष को दूर नहीं कर रहा है। अध्यादेश ने स्पष्ट रूप से न्यायालय के एक फैसले को रद्द कर दिया है जो निष्पक्ष प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए निर्धारित किया गया था।

33. हमने पूरे विवादित अध्यादेश को उत्सुकता से पढ़ा है और उसका अवलोकन इंगित करता है कि यह नियमितीकरण का एक स्पष्ट प्रयास है। किए गए प्रवेश जिन्हें न केवल केरल उच्च न्यायालय द्वारा बल्कि इस न्यायालय द्वारा अमान्य घोषित किया गया था, क्योंकि इस न्यायालय ने [2018] 10 एस. सी. आर. के मामले की सुनवाई के बाद ए. एस. सी. द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेश पर विचार किया था।

कई दिन और अदालत ने एक तर्कपूर्ण आदेश पारित किया था। मामलों को खारिज/निपटाते समय, इस न्यायालय ने 30 छात्रों को निर्देश दिया

जिन्हें अवैध रूप से प्रवेश से वंचित कर दिया गया था, उन्हें अगले शैक्षणिक सत्र 2017-18 में प्रवेश दिया जाएगा। यह स्पष्ट रूप से मामले को सीमित रूप से खारिज नहीं किया गया था, बल्कि एक तर्कपूर्ण आदेश था। कॉलेजों और अन्य लोगों द्वारा दायर रिट याचिकाओं में, 14.11.2016 दिनांकित आदेश की वैधता और वैधता पर सवाल उठाया गया था। हालांकि, इस अदालत ने इसे बरकरार रखा है। हम यह भी ध्यान देते हैं कि दोनों मेडिकल कॉलेजों द्वारा इस न्यायालय में भारी मात्रा में अभिलेख दायर किए गए थे। जब निर्णय दिया गया तो छात्रों को भी सुना गया। इसके बाद भी कई याचिकाएं दायर की गईं जिन्हें इस अदालत ने खारिज कर दिया। इस प्रकार, जब इस न्यायालय ने अवैधता और अनियमितताओं और उचित प्रक्रिया का पालन नहीं करने के आधार पर दिनांक 1 के आदेश को बरकरार रखा है, तो ऐसे प्रवेशों को बिल्कुल भी नियमित नहीं किया जा सकता था। यदि अवैध कार्रवाई को छिपाने की ऐसी शक्ति राज्य को दी जाती है

सरकार दो कॉलेजों के अलग-अलग मामलों में, वह दिन दूर नहीं है जब हर फैसले को रद्द किया जा सकता है। तत्काल मामले में यह स्पष्ट है कि राज्य सरकार ने अपनी शक्तियों को पार कर लिया है और

न्यायपालिका के लिए आरक्षित क्षेत्र में स्थापित। यह फैसले को रद्द नहीं कर सकता था। फैसले द्वारा ऑनलाइन प्रक्रिया निर्धारित की गई थी। विधान द्वारा बनाए गए किसी भी मौजूदा कानून के प्रावधान को राज्य सरकार द्वारा विवादित अध्यादेश द्वारा नहीं बदला गया है, लेकिन प्रवेश में पाई जाने वाली अवैधताओं को दूर करने की मांग की गई थी। निष्पक्ष प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए निर्णय में क्या निर्धारित किया गया था जो यदि पालन किए जाने की आवश्यकता थी तो इसे पूर्ववत करने की मांग की गई थी, यह निर्णय पर बैठने के राज्य सरकार के पूरी तरह से अस्वीकार्य कार्य के अलावा और कुछ नहीं था और यह निर्णय के प्रभाव पर अध्यादेश सेटिंग को शून्य घोषित नहीं कर सकता था।

34. यह भी स्पष्ट है कि राज्य सरकार ने विवादित अध्यादेश के माध्यम से जो किया है, वह न केवल अस्वीकार्य है और उससे परे भी है

विधायी क्षमता इसका पालन न करके विचाराधीन कॉलेजों द्वारा की गई अवैधता और मनमानेपन को बनाए रखने का भी प्रभाव पड़ता है।

उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि का अधिदेश, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई है। मनमानेपन और अवैधता को अवैध और अस्वीकार्य तरीके से छिपाने का प्रयास किया गया है, जिसके लिए राज्य सरकार के पास कोई क्षमता नहीं थी। अध्यादेश में किए गए प्रावधान अन्यथा हैं

संविधान के अनुच्छेद 50 के तहत निहित शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के उल्लंघन के अलावा काफी अवैध और मनमाना भी

भारत।

भारत की जिला परिषद v. केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]35. रिलायंस को प्रतिवादियों द्वारा कुन्हयमद एंड ओआरएस में अदालत के एक फैसले पर रखा गया है। वी. केरल राज्य और अन्र। (2000) सी 359 ताकि यह तर्क दिया जा सके कि इस न्यायालय ने बोलने के आदेश द्वारा विशेष याचिका को खारिज नहीं किया है। इस प्रकार, इसे एक माना नहीं जा सकता है

दाँत। रिलायंस को निम्नलिखित टिप्पणियों पर रखा गया है:

ई कोर्ट:

" 40. अपील के लिए विशेष अनुमति की मांग करने वाली याचिका को कई कारणों से खारिज किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इसे अस्वीकार किया जा सकता है (i) समय द्वारा वर्जित के रूप में, या (ii) एक दोषपूर्ण प्रस्तुति होने के कारण, (iii) याचिकाकर्ता को याचिका दायर करने का कोई अधिकार नहीं है, (iv) याचिकाकर्ता का आचरण जो उसे न्यायालय द्वारा किसी भी अनुग्रह के लिए अयोग्य ठहराता है, (iv) याचिकाकर्ता द्वारा इस न्यायालय द्वारा विचार के लिए उठाया गया प्रश्न विचार के लिए उपयुक्त नहीं है या देश के शीर्ष न्यायालय द्वारा निपटाए जाने के योग्य नहीं है। ऐसी याचिकाओं का निपटारा करते समय इस न्यायालय द्वारा अक्सर प्रयोग की जाने वाली अभिव्यक्ति यह है -

" सुना और खारिज किया "," खारिज "," समय द्वारा वर्जित के रूप में खारिज "और इसी तरह। हो सकता है कि प्रवेश के स्तर पर इसके विपरीत हो।

पार्टी कैविएट या नोटिस पर दिखाई देती है और प्रतियोगिता की पेशकश करती है

याचिका की रखरखाव क्षमता। न्यायालय याचिका दायर करने के लिए अनुमति मांगने वाली याचिकाकर्ता की प्रार्थना की योग्यता पर अपना दिमाग लगा सकता है और एक राय बनाने के बाद कह सकता है कि "खारिज कर दिया गया है। गुण "। ऐसा आदेश एकतरफा भी पारित किया जा सकता है, अर्थात

विरोधी पक्ष की अनुपस्थिति। किसी भी मामले में, बर्खास्तगी एक गैर-मौखिक आदेश द्वारा बर्खास्तगी बनी रहेगी जहां कोई कारण नहीं दिया गया है और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कोई कानून घोषित नहीं किया गया है। बर्खास्तगी अपील की नहीं बल्कि विशेष अनुमति याचिका की है। भले ही गुण-दोषों पर गौर किया गया हो, वे केवल विशेष अनुमति याचिका के गुण-दोष हैं। हमारी राय में न तो विलय का सिद्धांत और न ही संविधान का अनुच्छेद 141 इस ओर आकर्षित होता है

एक आदेश। समीक्षा अधिकारिता के प्रयोग के अधिकार देने वाले आधार

सी. पी. सी. के आदेश 47 नियम 1 या किसी अन्य वैधानिक द्वारा प्रदत्त

के प्रयोग में पारित आदेश की समीक्षा का प्रावधान या अनुमति देना

उच्च न्यायालय की रिट या पर्यवेक्षी अधिकारिता (जहां आदेश 47 के नियम 1 से अंतर्निहित या उभरने वाले सिद्धांत भी हैं)

सी. पी. सी. दिशानिर्देशों के रूप में कार्य करता है) आवश्यक रूप से वही नहीं है जिस पर

यह न्यायालय विशेष अनुदान देने या न देने के लिए विवेक का प्रयोग करता है इस उद्देश्य के लिए याचिका का निपटान करते समय अपील करने की अनुमति। केवल विशेष अनुमति याचिका की अस्वीकृति अधिकार क्षेत्र [2018] 10 एस. सी. आर. को नहीं छीनती है।

न्यायालय, न्यायाधिकरण या मंच का, जिसका आदेश अपने स्वयं के आदेश की समीक्षा करने के लिए विशेष अनुमति के लिए याचिका का विषय बनाता है, यदि समीक्षा अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के लिए आधार मौजूद हैं। जहां एस. एल. पी. को अस्वीकार करने का आदेश एक बोलने वाला आदेश है, यानी जहां इस न्यायालय द्वारा विशेष अनुमति के लिए याचिका को अस्वीकार करने के लिए कारण दिए गए हैं और आदेश में कहा गया है, फिर भी आदेश अपील करने की अनुमति देने के अनुरोध को अस्वीकार करने वाला बना रहता है। याचिकाकर्ता को इस न्यायालय के अपीलीय अधिकार क्षेत्र में प्रवेश करने की अनुमति दिए बिना सीमा पर वापस कर दिया गया है। यहाँ भी विलय का सिद्धांत लागू नहीं होगा। लेकिन इस न्यायालय द्वारा अपने आदेश में कहा गया या घोषित कानून संविधान के अनुच्छेद 141 को लागू करेगा। इस न्यायालय द्वारा अपने निर्णय को व्यक्त करते हुए अपने आदेश में दिए गए कारण (स्पष्ट रूप से या द्वारा)

आवश्यक निहितार्थ) तथ्य या कानून के बिंदु पर इस न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण के साथ या उससे भिन्न किसी भी राय को व्यक्त करने के लिए किसी अन्य न्यायालय, न्यायाधिकरण या प्राधिकरण की अधिकारिता को छीन लेगा क्योंकि ऐसा करने की अनुमति देना न्यायिक अनुशासन के प्रतिकूल होगा और इस न्यायालय के आदेश का अपमान होगा। हालाँकि, यह विलय के सिद्धांत के संदर्भ में नहीं होगा।

44. संक्षेप में हमारे निष्कर्ष इस प्रकार हैं:

(i) जहां किसी न्यायालय, न्यायाधिकरण या किसी अन्य प्राधिकरण द्वारा उच्चतर मंच के समक्ष पारित आदेश के खिलाफ अपील या संशोधन प्रदान किया जाता है और ऐसा उच्चतर मंच उसके समक्ष जारी किए गए निर्णय को संशोधित, उलट या पुष्टि करता है, तो अधीनस्थ मंच द्वारा निर्णय उच्चतर मंच द्वारा निर्णय में विलय हो जाता है और यह बाद वाला है जो कायम रहता है, सक्रिय रहता है और कानून की नजर में प्रवर्तन करने में सक्षम है।

((ii) संविधान के अनुच्छेद 136 द्वारा प्रदत्त अधिकार क्षेत्र दो चरणों में विभाजित है। पहला चरण अपील दायर करने के लिए विशेष अनुमति के लिए प्रार्थना के निपटारे तक है। दूसरा चरण तब शुरू होता है जब अपील करने की अनुमति दी जाती है और विशेष अनुमति याचिका को अपील में परिवर्तित किया जाता है।

(iii) विलय का सिद्धांत सार्वभौमिक या असीमित अनुप्रयोग का सिद्धांत नहीं है। यह वरिष्ठ मंच द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता की प्रकृति पर निर्भर करेगा और चुनौती देने या रखे जाने में सक्षम विषय वस्तु या विषय वस्तु विलय की प्रयोज्यता का निर्धारण करेगी। उच्चतर अधिकारिता भारत की जिला परिषद होनी चाहिए।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

याचिका का निपटारा करते हुए विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए नहीं बल्कि अपने अपीलीय अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए इसके खिलाफ अपील की गई अपील करने के लिए विशेष अनुमति के लिए। इसलिए विलय का सिद्धांत पहले वाले पर लागू किया जा सकता है न कि बाद वाले पर।

((iv) अपील करने के लिए विशेष अनुमति से इनकार करने का आदेश गैर-कानूनी हो सकता है।

आदेश संविधान के अनुच्छेद 141 के अर्थ के भीतर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कानून की घोषणा है। दूसरा, कानून की घोषणा के अलावा, आदेश में जो कुछ भी कहा गया है, वह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष हैं जो उसके पक्षों को और न्यायालय, न्यायाधिकरण या प्राधिकरण को न्यायिक अनुशासन के माध्यम से उसके बाद की किसी भी कार्यवाही में बाध्य करेगा, सर्वोच्च न्यायालय देश का सर्वोच्च न्यायालय है। लेकिन, इसका मतलब यह नहीं है कि अदालत, न्यायाधिकरण या प्राधिकरण के आदेश का उच्चतम न्यायालय के आदेश में विलय हो गया है। विशेष अनुमति याचिका को अस्वीकार करना या यह कि सर्वोच्च न्यायालय का आदेश ही एकमात्र आदेश है जो पक्षों के बीच बाद की कार्यवाही में न्यायिक आधार पर बाध्यकारी है,

(vi) एक बार अपील करने की अनुमति दे दी गई है और सर्वोच्च न्यायालय की अपीलीय अधिकारिता को लागू किया गया है, अपील में पारित आदेश विलय के सिद्धांत को आकर्षित करेगा; आदेश उलट, संशोधन या केवल पुष्टि का हो सकता है।

(vii) किसी अपील को प्राथमिकता दिए जाने या अपील करने की अनुमति मांगने वाली याचिका को उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील में परिवर्तित किए जाने पर, समीक्षा याचिका पर विचार करने का उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र समाप्त हो जाता है, जैसा कि सी. पी. सी. के आदेश 47 के नियम (1) के उप-नियम (1) द्वारा प्रदान किया गया है।

आदेश इस न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष हैं जो पक्षकारों और न्यायालय, न्यायाधिकरण या प्राधिकरण को भी बाध्य करेंगे। 36. जब हम इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को पढ़ते हैं, तो सभी पक्षों ने दलीलें दायर की हैं, जबकि इस न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया था। इससे पहले दस्तावेजों और ढेर सारे दस्तावेजों को रिकॉर्ड में लेने के लिए जवाबी हलफनामे, प्रत्युत्तर और विभिन्न अन्य आवेदन प्रस्तुत किए गए थे।

अदालत और इस पर कई दिनों तक बहस हुई। इस न्यायालय ने मामले की सुनवाई की है और उसके बाद राय व्यक्त की है और निष्कर्ष दर्ज किए हैं

पहली बार 14.11.2016 दिनांकित आदेश की वैधता के बारे में क्योंकि आदेश उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं था, 22.3.2017 पर पारित आदेश के अनुसार यह देखते हुए कि:

" पक्षकारों की विद्वान सलाह सुनी।

हमें दिनांकित 14.11.2016 आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं मिलता है।

ए. एस. सी. ने करुणा के मामले में 30 छात्रों को पाया है।

मेडिकल कॉलेज, जिन्हें अवैध रूप से वंचित कर दिया गया है मेधावी होने के बावजूद, हम कॉलेज और अन्य सभी संबंधित अधिकारियों को करुणा मेडिकल कॉलेज में अगले शैक्षणिक सत्र में उन्हें प्रवेश देने का निर्देश जारी करना उचित समझते हैं और इसके लिए उपलब्ध सीटों की संख्या, शैक्षणिक सत्र के लिए विचाराधीन कॉलेज के लिए 30 कम की जाएगी।

तदनुसार, विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज कर दिया जाता है। लंबित आवेदनों का निपटारा कर दिया गया है "। भारत की चिकित्सा परिषद v.

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

इस न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त आदेश से यह स्पष्ट है कि

इस न्यायालय को दिनांकित 14.11.2016 आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं मिला। एसएलपी। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के खिलाफ भी खारिज कर दिया गया था और इस न्यायालय ने निर्देश दिया था कि अगले सत्र में 30 छात्रों को प्रवेश दिया जाए। स्वतंत्र निर्देश जारी किए गए जिनका उच्च न्यायालय द्वारा आदेश नहीं दिया गया था। इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि उन्हें होना चाहिए

शैक्षणिक सत्र 2017-18 में प्रवेश। इस प्रकार, प्रत्यर्थियों के मुंह में यह तर्क देना बिल्कुल भी नहीं है कि यह इस न्यायालय द्वारा गुण-दोष पर निर्णय नहीं था। प्रस्तुतिकरण चौंका देने वाला है और इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त आदेश द्वारा मामलों पर निर्णय लेने से पहले मामलों की सुनवाई करते समय किए गए अद्भुत प्रयास और दिए गए समय की उपेक्षा में है। 37. उत्तरदाताओं की ओर से यह भी तर्क दिया गया कि एन. ई. ई. टी. योग्यता वह आधार है जिसे अध्यादेश में अपनाया गया है; एक छात्र

जो अन्यथा प्रवेश प्राप्त कर सकता था, यदि प्रक्रिया का पालन किया जाता, तो उसे बिना किसी गलती के पाठ्यक्रम में प्रवेश से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। प्रस्तुतिकरण, हालांकि आकर्षक है, खोखला है और मूल्यांकन के लिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है। सबसे पहले मामला अंत में निर्णय लिया जाता है और अंत में इस न्यायालय तक समाप्त हो जाता है। मेरिट पहले भी आधार था जब प्रवेश एन. ई. ई. टी. के माध्यम से किए जाने थे और आवश्यक "ऑनलाइन" प्रक्रिया का पालन किया जाना था। यह आधार का परिवर्तन नहीं है जो योग्यता मानदंड द्वारा किया गया है। इसके अलावा, जब एक बार ऑनलाइन आवेदन प्राप्त करने के लिए निर्णय में निर्धारित बुनियादी प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया था, तो उस आधार पर रद्द किए गए प्रवेशों को बिल्कुल भी मान्य नहीं किया जा सकता था। महाविद्यालय अपने द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया की निष्पक्षता के बारे में इस न्यायालय को संतुष्ट करने में असमर्थ थे। इस प्रकार, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले के साथ-साथ ए. एस. सी. के दिनांकित 14.11.2016 आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया। जब योग्यता पहले भी आधार थी, तो यह नहीं कहा जा सकता कि विधायिका ने कुछ नया पेश करने का प्रयास किया है। यह नहीं कहा जा सकता है कि राज्य विधानमंडल द्वारा अब किसी भी दोष को मौजूदा कानून से हटा दिया गया है। वास्तव में, अदालत का जो फैसला था, उसे रद्द करने का प्रयास किया गया है। यह और कुछ नहीं बल्कि उस फैसले को रद्द करने का प्रयास है जो विधायिका नहीं कर सकती, क्योंकि हमारे पास न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका की शक्तियों के पृथक्करण का एक अच्छी तरह से परिभाषित क्षेत्र है।

38. डॉ. प्रीति श्रीवास्तव और अन्र में निर्णय। वी. एम. पी. और अन्य का राज्य। (1999) 7 उत्तरदाताओं द्वारा एस. सी. सी. 120 का उल्लेख किया गया है।

जिसे न्यायालय ने किसी राज्य [2018] 10 एस. सी. आर. में स्नातकोत्तर चिकित्सा पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए सामान्य प्रवेश परीक्षा की आवश्यकता के प्रश्न पर विचार किया।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

यह माना जाता है कि सामान्य प्रवेश परीक्षा अलग-अलग राज्यों से आने वाले सभी उम्मीदवारों की योग्यता को ध्यान में रखते हुए विशिष्ट मानदंड प्रदान करती है।

आरएसआईटीएस। अकेले सामान्य प्रवेश परीक्षा विशेष शिक्षा के लिए सक्षम छात्रों के होने की प्रतिस्पर्धा को संतुलित करेगी। यह

टी ने निम्नलिखित टिप्पणियां की हैं:

" 28. यह तर्क किसी राज्य में स्नातकोत्तर चिकित्सा पाठ्यक्रमों के लिए एक सामान्य प्रवेश परीक्षा की आवश्यकता के अंतर्निहित कारणों की अनदेखी करता है। एक राज्य में कई विश्वविद्यालय हो सकते हैं जो M.B.B.S पाठ्यक्रमों का संचालन करते हैं। अध्ययन के पाठ्यक्रम नहीं हो सकते हैं

वर्दी। शिक्षण की गुणवत्ता समान नहीं हो सकती है। M.B.B.S परीक्षा में मूल्यांकन का मानक भी नहीं हो सकता है

विभिन्न विश्वविद्यालयों में वर्दी। इसके परिणामस्वरूप कुछ बेहतर विश्वविद्यालयों में जो मूल्यांकन के लिए अधिक सख्त परीक्षण लागू करते हैं छात्रों के प्रदर्शन के अनुसार, M.B.B.S परीक्षा में उत्तीर्ण अंक प्राप्त करने के लिए प्रदर्शन के उच्च मानक की आवश्यकता होती है। इसी तरह, अन्य विश्वविद्यालयों की तुलना में उच्च अंक प्राप्त करने के लिए प्रदर्शन के उच्च मानक की आवश्यकता हो सकती है। कुछ विश्वविद्यालय इस परिणाम के साथ छात्रों का उदारता से मूल्यांकन कर सकते हैं कि उम्मीदवार

कम ज्ञान के साथ उत्तीर्ण अंकों को सुरक्षित करने के लिए ऊपर हो सकता है

M.B.B.S. परीक्षा; जबकि यह भी आसान हो सकता है

उम्मीदवार उच्च स्तर पर अंक प्राप्त करें। इसलिए, एक सामान्य प्रवेश परीक्षा विभिन्न विश्वविद्यालयों से आने वाले सभी उम्मीदवारों की योग्यता का आकलन करने के लिए एक समान मानदंड प्रदान करती है। जाहिर है, जैसे ही कोई यह स्वीकार करता है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों में शिक्षण और मूल्यांकन के अलग-अलग मानक हो सकते हैं, इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि जिन उम्मीदवारों ने M.B.B.S परीक्षा उत्तीर्ण की है। अपने छात्रों का मूल्यांकन करना, आवश्यक रूप से, उत्तीर्ण नहीं होता, अगर वे एक ऐसी परीक्षा में उपस्थित होते जहां अधिक सख्त मूल्यांकन किया जाता है। इसी तरह, जिन उम्मीदवारों ने M.B.B.S परीक्षा में बहुत अधिक अंक प्राप्त किए हैं, जहां मूल्यांकन उदार है, वे ऐसा करेंगे।

यदि वे किसी ऐसे विश्वविद्यालय की परीक्षा के लिए उपस्थित हुए होते जहाँ सख्त मानक लागू किए गए होते तो उन्हें कम अंक मिले होते। इसलिए, इस तरह की एक सामान्य प्रवेश परीक्षा का उद्देश्य केवल

चयन के लिए ग्रेड उम्मीदवार। इसका उद्देश्य एक सामान्य मानदंड द्वारा सभी उम्मीदवारों का मूल्यांकन करना भी है। इसलिए, इस संभावना को भी ध्यान में रखना चाहिए कि कुछ उम्मीदवार जिन्होंने भारत की अधिक "उदार" मेडिकल काउंसिल से M.B.B.S परीक्षा उत्तीर्ण की हो।

केरल राज्य और ओ. आर. एस. [अरुण मिश्रा, जे।]

विश्वविद्यालय, प्रवेश परीक्षा में अर्हता प्राप्त नहीं कर सकते हैं जहां विभिन्न विश्वविद्यालयों के सभी उम्मीदवारों को न्याय देने के लिए एक बेहतर और समान मानक लागू किया जाता है। विशेष शिक्षा के लिए उपयुक्त उम्मीदवारों के चयन के हित में, यह आवश्यक है कि सामान्य प्रवेश परीक्षा एक निश्चित मानक की हो और उस परीक्षा को उत्तीर्ण करने के लिए योग्यता अंक निर्धारित किए जाएं। यह अकेले सक्षम होने की प्रतिस्पर्धी इक्विटी को संतुलित करेगा।

विशेष शिक्षा के लिए छात्र और विशेष शिक्षा के स्तर पर भी पिछड़े लोगों के लिए कुछ जगह प्रदान करने की आवश्यकता

स्नातकोत्तर शिक्षा जो सुपर स्पेशलिटी से एक कदम नीचे है।

वनों के कारण इन टिप्पणियों से कोई मदद नहीं मिली है। राज्य सरकार अभियुक्तों को घोषित करने में सक्षम नहीं थी। अध्यादेश जैसा कि पहले ही आयोजित किया जा चुका है। सवाल को नए सिरे से उत्तेजित नहीं किया जा सकता है जो योग्यता के आधार पर प्रवेश प्राप्त कर सकते थे। हो सकता है कि बड़ी संख्या में अन्य छात्र हों जो प्रवेश प्राप्त करने के अपने अधिकार से वंचित रहे हों। जिन निर्णयों ने अंतिमता प्राप्त कर ली है और जो सभी संबंधित लोगों के लिए बाध्यकारी हैं, उनके मद्देनजर अब इस तरह की जांच की अनुमति नहीं है।

अवैधता को कायम रखें। इस मामले में सवाल यह है कि विवादित अध्यादेश जारी करने की राज्य सरकार की शक्ति क्या है। अनीता जोब (ऊपर) के उक्त निर्णय में यह सवाल नहीं था। यह निर्णय तत्काल मामले में लागू नहीं होता है। पिछले निर्णयों को ध्यान में रखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह राज्य सरकार द्वारा विवादित अध्यादेश को लागू करने के लिए सक्षम नहीं था, इस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग बिल्कुल नहीं किया जा सकता है ताकि इस मामले में अवैधता को कायम रखा जा सके। पहले की गई घोषणाओं का दृश्य।

40. नतीजतन, रिट याचिकाओं को अनुमति दी जानी चाहिए। द.

ए.

विवादित अध्यादेश को अधिकार से बाहर घोषित किया जाता है और न्यायपालिका के लिए निर्धारित क्षेत्र पर लागू किया जाता है क्योंकि यह फैसले को रद्द करने का प्रयास करता है

और उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश।

बी.

कल्पना के. त्रिपाठी